योगदा सत्संग

(सेल्फ-रीयलाइज़ेशन)

श्री श्री परमहंस योगानन्द द्वारा संस्थापित

IV/91

श्री श्री दयामाता, संघमाता एवं अध्यक्षा, योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया/
सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप।

योगदा सत्संग

(सेल्फ-रीयलाइज़ेशन)

श्री श्री परमहंस योगानन्द द्वारा संस्थापित

शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक आरोग्यता हेतु समर्पित

(उचित भोजन, ठीक जीवन-यापन और ईश्वर की सर्व-शक्तिमान दिव्य ऊर्जा द्वारा शरीर को पुनः शक्ति प्रदान कर शारीरिक रोग का निवारण करना; एकाग्रता, रचनात्मक विचार एवं प्रसन्नता द्वारा मन से असंतुलन और अयोग्यता को दूर करना, और ध्यान द्वारा सदा-सम्पूर्ण आत्मा को आध्यात्मिक अज्ञानता के बंधनों से मुक्त करना)

IV/91

योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया
कलकत्ता, पश्चिमी बंगाल

अनुक्रमणिका

आवरण पृष्ठ : श्री श्री परमहंस योगानन्द, 1924 में पारमहाद्वीपो प्रवचन-यात्रा समय जलयान में अलास्का जाते हुए।

IV/91

दैवी चिकित्सा के लिए प्रार्थना

"हे परम पिता; मैं असीम समृद्धि, स्वास्थ्य, और ज्ञान का अभिलाषी हूँ। मैं उसे सांसारिक स्रोतों से नहीं बल्कि आपके सर्वसम्पत्तिशाली, सर्वशक्तिमान, सर्वदानशील हाथों से चाहता हूँ।"

—श्री श्री परमहंस योगानन्द

ईश्वर सृष्टि के प्रत्येक कण में रहते हैं। यदि वे अपनी जीवन-दायक विद्यमानता को हटा लें तो ब्रह्माण्ड, बिना कोई चिह्न छोड़े, आकाश में लुप्त हो जाएंगे।

मानव पूर्णरूपेण अपने सृष्टिकर्ता पर निर्भर करता है। जिस प्रकार उसके द्वारा प्राप्त स्वास्थ्य, सुख और सफलता ईश्वर-विहित नियमों के पालन का फलस्वरूप हैं, इसी प्रकार जिस सहायता और चिकित्सा की उसे आवश्यकता है वे प्रार्थना के द्वारा सीधे ईश्वर से प्राप्त हो सकती हैं।

शारीरिक रोग, मानसिक असामंजस्य एवं आध्यात्मिक अज्ञान की चिकित्सा के लिए प्रार्थनाएं योगदा सत्संग/सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप संन्यासियों द्वारा प्रतिदिन की जाती हैं। ईश्वर के आशीर्वाद से हज़ारों आध्यात्मिक सहायता प्राप्त कर चुके हैं।

आप अपने लिए अथवा अपने प्रियजनों के लिए निम्न पते पर प्रार्थना के लिए निवेदन कर सकते हैं :

योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया

परमहंस योगानन्द पथ

राँची-834 001, बिहार, भारत

दूरभाष : राँची (0651) 304836

तार : योगदा मठ, राँची

सफलता के स्रोत से अन्तर्संम्पर्क

(Acquiring Attunement With the Source of Success)

श्री श्री परमहंस योगानन्द

सेल्फ-रीयलाइजेशन फेलोशिप मन्दिर, लास एन्जिलस, केलिफोर्निया, 1935

बहुत कम लोग जानते हैं कि ईश्वरीय विधान सभी कार्यों का संचालन करता है एवं उनके फलों को निर्धारित करता है। इस प्रकार, प्रत्येक व्यक्ति के भाग्य का निर्देशन दैवयोग से नहीं प्रत्युत उन कारणों द्वारा होता है जिन्हें वह स्वयं गतिमान करता है। आध्यात्मिक अनुभूति द्वारा व्यक्ति के जीवन की प्रत्येक परिस्थिति का सम्बन्ध, वैज्ञानिक ढंग से, किसी विशेष कारण अथवा कारणों की रूपरेखा में खोजा जा सकता है। परन्तु सामान्य व्यक्ति यह नहीं जानता कि किस प्रकार कार्य-कारण का नियम उसके जीवन का संचालन कर रहा है, अतः उसका विश्वास है कि जो कुछ भी उसे प्राप्त होता है वह अधिकतर संयोग तथा भाग्य की बात है। वह प्रायः कहता है, "यह मेरा सौभाग्य था," अथवा, "वह मेरा दुर्भाग्य है।" ऐसा कोई भाग्य नहीं जिसका निर्माण व्यक्ति ने पहले से, इस जन्म में अथवा जन्मान्तरों में, न किया हो; और वर्तमान में अथवा दूर अतीत में—कभी-कभी इस जीवन के द्वारों में प्रवेश करने से अनेक जन्म पहले व्यक्ति के अपने कार्यों द्वारा जो "पूर्वनिश्चित" हुआ है, उसके अतिरिक्त और कोई अभागा दुर्भाग्य नहीं है। इन स्वनिर्मित कारणों से ही कुछ लोग जन्म से निर्धन और अन्य धनी, कुछ स्वस्थ, अन्य अस्वस्थ आदि होते हैं। अन्यथा, यदि ईश्वर ने अपनी सभी सन्तान को बराबर बनाया तथा फिर कुछ को अनुकूल परिस्थितियों में तथा अन्य को प्रतिकूल स्थितियों में रहने के लिए भेजा हो तो ईश्वर का न्याय कहाँ होगा?

हम अपने जीवन को संचालित करने वाले कार्य-कारण के नियम को ही कर्म कहते हैं। कर्म का अर्थ है कार्य, तथा इसका अर्थ हमारे कार्यों के फल अथवा परिणाम भी है। भलाई अथवा बुराई के ये परिणाम ही लोगों के लिए अपने आपको बदलना अथवा अपनी परिस्थितियों को बदलना इतना कठिन बना देते हैं। और कोई स्पष्टीकरण नहीं है जो मनुष्यों में असमानताओं के ईश्वरीय न्याय को अस्वीकार न करे। और मैं कहूँगा, न्याय के बिना जीवन बेकार है।

तब यदि अतीत में आपकी सफलताओं या असफलताओं का निर्धारण न्यूनाधिक आपके ही द्वारा हुआ है तो क्या कोई ऐसा उपाय नहीं है जिससे आप अपनी वर्तमान परिस्थितियों को बदल सकें? हाँ, अवश्य है। आपको बुद्धि तथा इच्छाशक्ति दी गई हैं। कोई ऐसी कठिनाई नहीं है जिसका समाधान न हो सके, यदि आप विश्वास करें कि आपके पास अपनी कठिनाईयों से अधिक शक्ति है और अपनी बाधाओं को नष्ट करने के लिये उस शक्ति का प्रयोग करें। आपको सफल होने के लिये आवश्यक चेष्टा करनी होगी।

सफलता का अर्थ है इच्छानुसार आवश्यकता की पूर्ति

सफलता की सार्वलौकिक धारणा अधिक धन रखने पर केन्द्रित है। परन्तु वास्तविक सफलता का अर्थ है आवश्यक वस्तुओं को इच्छानुसार उत्पन्न करने की शक्ति रखना—उन वस्तुओं को अर्जित करने की शक्ति, जो आपके पूर्ण अस्तित्व तथा सुख के लिये सचमुच आवश्यक हैं। इसलिये यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि वास्तविक आवश्यकता किन वस्तुओं की है; अर्थात् आवश्यकताओं तथा इच्छाओं के अन्तर को जानना। यदि "आवश्यकताओं" की कल्पना को कम कर लिया जाये तो सुखी जीवन की आवश्यकताओं को आसानी से पूरा किया जा सकता है।

संतुलित जीवन का आदर्श पूर्व तथा पश्चिम के विचारों के बीच का मार्ग है। पूर्व के लोग कहते हैं: "ईश्वर का ध्यान करो; जो कुछ आपके पास नहीं है उसकी चिन्ता न करो।" मेरे विचार में यह अत्यधिक

है। दूसरी ओर, पश्चिम के लोग कहते हैं, "आपके पास एक सुन्दर कार तथा घर, नये वस्त्र, तथा वह प्रत्येक वस्तु जो आपको सुखी तथा प्रसन्न रख सके, अवश्य होनी चाहिए। आप इसे खरीदने में समर्थ हैं अथवा नहीं, इसकी कोई चिन्ता नहीं।" पश्चिमी देशों में विलासिता ही लक्ष्य है; यह एक आदत है, तथा आदत का नियम व्यक्ति को उसके अभ्यस्त तरीकों से बद्ध कर देता है।

सादा जीवन बिताने का अर्थ निर्धनता अथवा निर्धनता की चेतना नहीं है। कुछ लोग कङ्गाल हैं। उनके जीवन दुःखी हैं; यह सादा जीवन का लक्ष्य नहीं है। सादगी का अर्थ है वासनाओं तथा आसक्तियों से मुक्त होना तथा भीतर में परम प्रसन्न रहना। सादा जीवन बिताने के लिये एक शिक्षित मन तथा अति शक्तिशाली इच्छाशक्ति की आवश्यकता होती है। इसमें न तो कठोरता और न ही अभाव अनिवार्य हैं, प्रत्युत अपनी वास्तविक आवश्यकता के लिये काम करने तथा उससे सन्तुष्ट रहने का ज्ञान अपेक्षित है। मूर्खता में धन का व्यय करना दुर्बलता है, भले ही आपके पास ऐसा करने के लिये साधन उपलब्ध हों। आत्मसंयम का प्रयोग करें तथा अपनी इच्छाओं को घटाकर उद्देश्यपूर्ण आवश्यकताओं में बदलें। और अपनी आय से अधिक खर्च न करें, यदि आप समृद्ध होना चाहते हैं तो यह प्रथम पाठ है। अपनी आय से कम खर्च करें, अन्यथा आप कदापि सन्तुष्ट एवं सुखी नहीं होंगे। सर्वोपरि, यह विचार बनाये रखें : "मेरी प्रसन्नता अप्रतिबन्धित है; मैं किसी भी वस्तु के बिना रह सकता हूँ। परन्तु ईश्वर ने मुझे देखभाल करने के लिये एक शरीर दिया है, इसलिये मैं इसे जीवन की उचित आवश्यकताएं उपलब्ध कराने का पूर्ण प्रयास करूँगा।"

भारत के सन्त कितनी भव्यता एवं सादगी से रहते हैं। कुछ भी न रहते हुए वे राजाओं के वैभव से भी अधिक वैभवशाली हैं। सम्पूर्ण प्रकृति उनके साथ समायोजन करने लगती है। उनकी पूर्ण आन्तरिक सन्तुष्टि को ही आपको भी अपने भीतर उत्पन्न करना चाहिये। अर्थात् जो कुछ आपके पास है उसी से प्रसन्न रहना सीखना चाहिये। निःसन्देह,

एक संन्यासी की कुटिया में रहने की अपेक्षा, आधुनिक जीवन-यापन में अधिक आवश्यकताओं की ज़रूरत होती है। परन्तु जीवन में अपने साथ अधिक सम्पत्ति की आसक्ति को उठाये फिरने की अपेक्षा आपको उस शक्ति का विकास करना चाहिए जिसके द्वारा आवश्यकतानुसार अपनी आवश्यकता को आप प्राप्त कर सकें। यदि आपके पास वह शक्ति नहीं है तो चाहे आपके पास कितनी भी सम्पत्ति हो, आप निर्धन हैं। इस मापदण्ड से एक हेनरी फोर्ड अथवा राकफेलर को भी निर्धन कहा जा सकता है, क्योंकि आवश्यकताएं केवल भौतिक आवश्यकताओं की ही नहीं बनती हैं। धन की कोई भी मात्रा स्वास्थ्य एवं सुख का आश्वासन नहीं दे सकती। समृद्धि का अर्थ है शरीर, मन तथा आत्मा की समान रूप में सिद्धि।

विचार करें, जार्ज ईस्टमैन, जिसने कोडैक का आविष्कार किया, प्रत्येक सांसारिक वस्तु रखता था जिसकी कोई इच्छा कर सकता है। इसपर विचार करें! उसके पास विलासिता की वस्तुएं थीं; परन्तु उसकी समृद्धि में कोई त्रुटि थी, जिसके कारण उसे अपना जीवन असह्य हो गया। परिणामस्वरूप, उसने अपने सिर में गोली मारकर अपना जीवन समाप्त कर दिया। सुख मात्र धन तथा सम्पत्ति से कदापि प्राप्त नहीं हो सकता। जीसस क्राईस्ट के पास कोई धन न था। परन्तु ईश्वर का असीम ऐश्वर्य उन्हें उपयोग के लिए उपलब्ध था। अनेक बार उन्होंने इसका प्रदर्शन किया, जैसे उस अवसर पर जब उन्होंने पाँच हज़ार व्यक्तियों को पाँच रोटियों से भोजन कराया। और जब मृत्यु भी आई तो उसकी निर्दयता भी उनकी भीतरी सम्पत्ति को न छीन सकी। अन्त तक उन्होंने दूसरों के प्रति पहले सोचा : "परमपिता, इन्हें क्षमा कर दें क्योंकि ये जानते नहीं कि ये क्या कर रहे हैं।"

सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिये आपको जीसस के उदाहरण पर चलना आवश्यक है, आचारहीन व्यावसायिकों के उदाहरण पर नहीं। यदि आप समृद्धि के ईश्वरीय नियम का प्रयोग करना सीख लें तो समृद्धि आपकी सेवा में उपस्थित रहेगी। यह सुरक्षित मार्ग है। यह एकमात्र स्थिति

है जिसमें आप इस संसार में सुरक्षित हो सकते हैं। उस धन को कोई चोर नहीं चुरा सकता; इस सुरक्षा की प्रत्येक व्यक्ति को आवश्यकता है।

दूसरों की सहायतार्थ समृद्धि का विकास करें

समृद्धि के नियम को मानव अपने स्वार्थपूर्ण लाभ के लिये हेरा-फेरी से नहीं चला सकता। उस नियम का संचालन ईश्वर के नियन्त्रण में है तथा वे अपने नियमों को स्वेच्छापूर्वक मोड़ने अथवा तोड़ने की अनुमति नहीं देते। यदि मानव सफलता के ईश्वरीय नियम के साथ सामंजस्य में कार्य करता है तो वह प्रचुरता को प्राप्त करता है; यदि बुरे कार्यों द्वारा वह अपने जीवन में इसके उदार प्रवाह को तोड़ता है तो वह स्वयं को दण्डित करता है।

उस दिव्य नियम के सिद्धान्तों के साथ सामंजस्य रखते हुए आप कैसे कार्य करेंगे? सर्वप्रथम, जैसे मैंने कहा, विलासिताओं की इच्छा एवं आसक्ति का त्याग करें। अपने मन की शक्ति का विकास करें ताकि यह सरल वस्तुओं से सन्तुष्ट रहे। इसके पश्चात् यह कहें, "हाँ, मेरी आवश्यताएं मेरे उत्तरदायित्व का मात्र एक भाग है। कुछ लोग मुझपर आश्रित हैं और मुझे उनके प्रति भी अपना कर्तव्यभार निभाना चाहिए।" अपने परिवार की आपूर्ति करें, परन्तु अत्यधिक धन से अपने बच्चों को कदापि न बिगाड़ें।

जब तक आप अपनी समृद्धि में दूसरों के कल्याण को सम्मिलित नहीं करेंगे, आप क़दापि आदर्श रूप में समृद्ध नहीं होंगे। मेरा तात्पर्य निर्धनों को केवल उदासीनभाव से धन देने से नहीं है, बल्कि दूसरों को स्वयं अपनी सहायता करने में सहायक होने की सच्ची चेष्टा से है। तब आप अपने जीवन में आपूर्ति के महान नियम को कार्यरत देखेंगे। चाहे आपकी कोई भी स्थिति हो, वह पुण्य कर्मों के फल की प्राप्ति का नियम सदा आपकी सहायता के लिये आपके साथ होगा।

अधिकाँश लोग सर्वप्रथम अपने प्रति सोचते हैं, और अपनी इच्छाओं की सन्तुष्टि के लिये धन कमाने के विषय में सोचते हैं। यदि आप

ऐसा करते हैं तो शीघ्र अथवा विलम्ब से आप धोखा खायेंगे। इसके विपरीत आपको इस विचार से प्रारम्भ करना चाहिए, "मेरे जीवन का कर्तव्य दूसरों को प्रसन्न करना है।" आपके कार्य तथा योजनायें दूसरों के लिये कैसे लाभदायक हो सकती हैं, इससे प्रेरणा प्राप्त करें। फिर अपने लक्ष्यों को पूरा करने के लिये साधनों की योजना बनायें। सेवा करने के लिये आपके पास आवश्यक उपाय होने चाहिये। यदि आप गाय का दूध दुहें तो आपको गाय को चारा देना भी आवश्यक है। यदि उन्हें अपनी समृद्धि में सम्मिलित करने के योग्य बनाकर दूसरों की उत्तम सेवा करना उद्देश्य हो तो सुखी जीवन विताने तथा समृद्ध होने की आकांक्षा आध्यात्मीकृत हो जाती है। अच्छी सेवा करने में आपको लाभ अवश्य अधिक प्राप्त होगा; जब आपकी बिक्री अधिक होगी आप अपने जीवन स्तर को सुधार सकते हैं और दूसरों के लिये कुछ और भी अधिक कर सकते हैं। ईश्वरीय नियम इसी प्रकार कार्य करता है।

ईश्वर की शक्ति में विश्वास रखें

आप सीधे ईश्वर की शक्ति से रह रहे हैं, मानव समृद्धि से नहीं। आप तर्क कर सकते हैं कि जब तक आपके पास काम नहीं, आप भोजन नहीं कर सकते। ठीक है; परन्तु यदि मैं प्रचुर मात्रा में भोजन तथा धन आपके समक्ष रख दूँ तथा सहसा आपका हृदय रुक जाये, तो वे भौतिक वस्तुएं आपकी क्या भलाई करेंगी? कोई नहीं। केवल ईश्वर ने ही आपको जीवन, काम करने, बढ़ने तथा निष्पादन करने की शक्ति दी है। आपका अस्तित्व ही उनकी संकल्प शक्ति की अभिव्यक्ति है, अतः आप सीधे उनपर निर्भर क्यों नहीं करते? आपको यह पूर्णतः अवश्य याद रखना चाहिये।

यदि कोई आवश्यकता आ पड़े तो मैं कहता हूँ, "मुझे कार्य प्रारम्भ करना चाहिये।" परन्तु मैं प्रथम ईश्वर का मार्गदर्शन खोजे बिना किसी वस्तु की इच्छा अथवा किसी कार्य का प्रारम्भ कदापि नहीं करता। "परम-पिता, मैं तर्क करूँगा, मैं इच्छाशक्ति का प्रयोग करूँगा, मैं कार्य करूँगा,

परन्तु आप मेरे तर्क, इच्छाशक्ति तथा कार्य को उचित वस्तु की ओर मार्गदर्शित करें।" तब उपलब्धि की सभी शक्तियाँ मेरे साथ कार्य करती हैं। मैंने उस दिव्य शक्ति को छोटे एवं बड़े कार्यों में कार्यरत देखा है।

मैं केवल ईश्वर के लिये कार्यरत हूँ! मैंने उनके लिये सब कुछ त्याग दिया है। मैं उनकी सन्तान हूँ। यदि आप इस चेतना से रहते हैं कि आप उनकी सन्तान हैं और वे आपके परमपिता, तथा पक्के निश्चय से अपना पूरा प्रयास करने के लिये दृढ़प्रतिज्ञ हो जाते हैं, तब बाधाओं के होते हुए भी, तथा भूलों के होते हुए भी, उनकी शक्ति आपको सफल बनाने में सहायक होगी। मैं उस नियम से रहता हूँ। इस प्रकार मैं सेल्फ-रीयलाइज़ेशन मुख्यालय को प्राप्त करने योग्य हुआ, चाहे ऐसा करने हेतु मेरे पास भौतिक साधन उपलब्ध न थे। और देखिये, इस मंदी के समय में भी मैंने यह मन्दिर खरीद लिया है।* मैंने दिव्य नियम का प्रयोग किया तथा यह मन्दिर उसका फल है। जब तक आप भी उस नियम का पालन नहीं करते आप उस शक्ति को नहीं जान सकते जिसके विषय में मैं कहता हूँ।

यदि आप अपने परीक्षणों में ईश्वर-निष्ठा से मुस्कराते हुए तथा शंकाओं को आश्रय न देते हुए गुज़र सकते हैं, तो आप देखेंगे कि ईश्वर का नियम किस प्रकार कार्य करता है। सान फ्रांसिस्को में मेरे पास बैंक में केवल 200 डालर थे, तथा मैं एक प्रवचन-अभियान चलाने वाला था। मेरे पास प्रारम्भ करने के लिए भी पर्याप्त धन न था, तथा बहुत से बड़े बिलों का भुगतान करना बाकी था। मैंने कहा, "ईश्वर मेरे साथ हैं। उन्होंने मुझे यह परेशानी दी है तथा वे मेरी सहायता करेंगे।" यदि सारा संसार आपको त्याग दे, परन्तु आप जानते हैं कि वे आपके साथ हैं, तो उनका नियम आपके लिये चमत्कार दिखायेगा।

जब मेरा सेक्रेट्री मेरे पास आया तथा मैंने उसे बताया कि बैंक

*लॉस एन्जिलस में 711, 17 स्ट्रीट में दिसम्बर 1934 से सितम्बर 1939 तक सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप सत्संग होते थे। बाद में मन्दिर की सम्पत्ति नगर द्वारा सड़क हेतु ले ली गई थी। (प्रकाशक)

में हमारे पास कितना धन है, तो वह शब्दशः फर्श पर गिर पड़ा। मैंने कहा, "उठो।" वह काँप रहा था, "अपने बिलों का भुगतान न करने के कारण हमें बन्दीखाने जाना होगा।" मैंने कहा, "हम बन्दीखाने नहीं जा रहे हैं। सात दिन में हमारे पास अभियान के लिये पर्याप्त रुपये होंगे।" वह शंका करने वाला व्यक्ति था, परन्तु मुझे विश्वास था। मुझे धन की आवश्यकता अपने किसी लाभ के लिये नहीं थी, प्रत्युत ईश्वर के कार्य के प्रचार-प्रसार हेतु थी। मुझे कोई भय नहीं था, अपनी परेशानियों की दारुणता का भी नहीं। भय मुझसे डरता है। डर है किस बात का? आपको किसी वस्तु का भय नहीं होना चाहिये। ईश्वर में विश्वास रखते हुए सभी परेशानियों का सामना करो, आप विजयी होंगे। भगवद्गीता में कहा है, "मुझमें चित्त को रखते हुए, मेरी कृपा से, तुम सभी बाधाओं पर विजय प्राप्त करोगे।"* और इसपर विचार करें! मैं पैलेस होटल के सामने टहल रहा था जब एक सज्जन मेरे पास आये तथा बोले, "क्या मैं आपसे बात कर सकता हूँ?" हम में कुछ वार्तालाप हुआ और फिर उसने सहसा कहा, "मैं धन खर्च कर डालना चाहता हूँ। क्या मैं आपकी सहायता कर सकता हूँ?" मैंने उत्तर दिया, "मुझे आपके धन की आवश्यकता नहीं। आप मुझे धन किस लिये देंगे जब कि आप मुझे जानते तक नहीं?" उसने उत्तर दिया, "परन्तु मैं आपको अवश्य जानता हूँ; मैंने आपके विषय में बहुत कुछ सुन रखा है।" और वहीं पर उसने 27,000 डालर का चैक लिखा। मैंने इसमें ईश्वर का हाथ देखा।

ईश्वर को पाकर हम सब कुछ पा लेते हैं

परन्तु सबसे बड़ी विजय मुझे फीनिक्स में मिली। यदि केवल मेरी तरह ईश्वर की अनुकम्पा को प्रत्येक व्यक्ति अनुभव कर सके तो वे जान लेंगे, जैसे मैं जानता हूँ, कि ईश्वर में उन्हें पहले से ही प्रत्येक वस्तु प्राप्त है। फीनिक्स में मुझे यही अनुभव हुआ था। मैं अति गहनता

*18:58

से प्रार्थना एवं ध्यान कर रहा था क्योंकि प्रातः मुझे एक बहुत बड़ी आवश्यकता को पूरा करना था तथा किसी ने मुझे धोखा दे दिया था। मेरी प्रार्थना रुपये के लिये नहीं, मुक्ति के लिये थी। मैंने जगन्माता से कहा, "मुझे इन आपत्तियों में क्यों डाला गया है? मुझे ऐसे संकट का सामना क्यों करना पड़ रहा है?" परन्तु मैंने यहीं समाप्ति नहीं की। मैं ध्यान करता रहा और मां से प्रार्थना की, "मुझसे बात करो। यदि आप मुझे ऐसा करने को कहती हैं तो मैं प्रत्येक वस्तु को छोड़कर, आपके नाम का गुणगान करते हुए, संस्था से बाहर चला जाऊँगा। मुझे आपके अतिरिक्त कोई अन्य वस्तु नहीं चाहिये। मैं अपने लिये कुछ नहीं माँगता। मेरी परीक्षा ले लो। यदि आपकी इच्छा हो तो मैं इसी क्षण सब कुछ त्याग दूँगा। मैं आपके प्रकाश में चला जाऊँगा।

जब जगन्माता ने देखा कि जो कुछ मैंने कहा था उसे करना ही मेरा अभिप्राय था तो उसने यह कहा, "मैंने तो बहुत समय पहले ही तुमको मुक्त कर दिया था; परन्तु क्योंकि तुम सोचते हो तुम मुक्त नहीं हो, इसी कारण तुम मुक्त नहीं हो। मृत्यु का नृत्य हो अथवा जीवन-नृत्य, यह जानो कि ये मुझसे आते हैं तथा इसी में आनन्द मनाओ। तुम और क्या चाहते हो जब कि मैं तुम्हारे पास हूँ?" उस दिन से मैं मुक्त हो गया।

यदि आपके मन में ईश्वर को प्रसन्न करने की इच्छा सर्वोपरि है तो वे आपकी देखभाल करेंगे। "...जब मैं तुम्हारे पास हूँ तो इससे अधिक तुम और क्या चाहते हो?" क्या आप इसे याद रखेंगे? आप में से प्रत्येक इसे याद रखेंगे? कोई बहुत कुछ याद रखने के लिये नहीं है। यदि आप ध्यान करेंगे तथा सच्चे हृदय से ईश्वर से प्रार्थना करेंगे तो आप उन्हें पा लेंगे; तथा वे आपको सम्पूर्ण आवश्यक समृद्धि प्रदान करेंगे।

ध्यान के नियम का प्रयोग करो। यह नियमों का नियम है क्योंकि यह समस्त शक्तियों के स्रोत से उत्तर प्राप्त करता है। जब जगन्माता ने मुझे वे शब्द कहे तो मैं जान गया था कि सब कुछ ठीक होगा। वह आवश्यकता पूरी हुई तथा मैं आपत्ति से बच गया।

वह शक्ति आपके लिये कार्य करेगी जैसे उसने सदा मेरे लिये काम किया है। मैं इन सत्यों को अपने निजी अनुभवों से कहता हूँ। यदि मैंने उन्हें अपने जीवन में प्रदर्शित न किया होता तो उनके विषय में बोलना मेरे लिये संभव नहीं होता। मैं ईश्वर में विश्वास से रहता हूँ। मेरी शक्ति ईश्वर है। मैं किसी अन्य शक्ति में विश्वास नहीं रखता। जब मैं उस शक्ति पर एकाग्रता करता हूँ, यह मेरे माध्यम से कार्य करती है।

इस देश में अत्यन्त सफल प्रवचनकर्ताओं में से एक के रूप में मेरा उल्लेख हुआ है। हज़ारों को मैंने शिक्षा दी है, परन्तु इसके कारण मुझे स्वयं पर गर्व नहीं है। मेरी सफलता केवल इस लिये है कि मैंने एकमात्र ईश्वर की शक्ति में विश्वास किया है। अन्ततः मैंने समस्त सार्वजनिक प्रवचन-कार्य छोड़ दिया—मैं अब ईश्वर के लिये प्रत्येक वस्तु का त्याग कर रहा हूँ। मैं अनुभव करता हूँ कि मैंने अपने जीवन-लक्ष्य के उस भाग को पूरा कर लिया है। वह लक्ष्य है आत्माओं को भीड़ से चुनना तथा ईश्वर को जानने में उनकी सहायता करना। मैंने देश भर में ऐसी आत्माओं को पाया है, और मैं उन्हें प्रशिक्षण दे रहा हूँ।*

*1935 में यह प्रवचन देने के समय तक परमहंस जी ने अनेक ऐसे निजी शिष्यों को आकर्षित कर लिया था जिन्हें उनके जागतिक कार्यकलाप में महत्त्वपूर्ण भूमिकायें निभाने का सौभाग्य प्राप्त था। इनमें वे दो भी सम्मिलित थे जिनको उन्होंने अपने कार्य का मार्गदर्शन करने हेतु, योगदा सत्संग/सेल्फ-रीयलाइज़ेशन के अध्यक्ष के रूप में अपना आध्यात्मिक उत्तराधिकारी नियुक्त किया : अर्थात् श्री श्री राजर्षि जनकानन्द, जिनकी कन्सास सिटी में 1932 में गुरु से भेंट हुई, तथा श्री श्री दयामाता, जिन्होंने एक साल पहले साल्टलेक सिटी में उनके सत्संग सुने थे। प्रवचन अभियान के समूहों से आकर्षित होने वाले अन्य शिष्यों में, जो परमहंस जी के कार्य के लिये अपने जीवन समर्पित करने के लिये आगे आये तथा उनसे व्यक्तिगत प्रशिक्षण प्राप्त किया, डॉ० तथा श्रीमती लुईस जिन्होंने बोस्टन में 1920 में उनसे भेंट की थी, ज्ञानमाता (सीएटल 1924); तारामाता (सान फ्रांसिस्को, 1924), दुर्गामाता (डेट्राइट 1929) आनन्दमाता (साल्टलेक सिटी 1931), श्रद्धामाता (टेकोमा 1933), तथा शैलसुता माता (सान्ता बारबरा 1933) थे। 1930 की दशक के मध्य में देश-व्यापी प्रवचनों से हटने के पश्चात् परमहंसजी ने गंभीरता से साधना करने वाले

मैं ईश्वर की सहायता से चलता हूँ। रुपये का कोई विचार नहीं रहा है परन्तु मानवजाति की सेवा ही ध्यान में रही है, और इस कारण से प्रभु ने मेरे अस्तित्व एवं सेल्फ-रीयलाइज़ेशन के इस कार्य के अस्तित्व की सहायतार्थ सभी मार्ग खोल दिये हैं। मैं आपकी सेवा करना चाहता हूँ बस, और कुछ नहीं। इसी लिये मैं यहाँ हूँ।

जिस क्षण भी मुझे सहायता की आवश्यकता होती है वह तुरन्त ईश्वर से प्राप्त होती है। क्रिसमस के लिये कुछ रुपये की आवश्यकता थी। क्या हुआ? एक शिष्य ने लिखकर पूछा, "आपका डेट्रायट में बैंक में कुछ रुपया जमा है। आप इसका क्या करना चाहते हैं? मैंने कहा, "इसे तुरन्त भेज दो।" ठीक समय पर मेरी आवश्यकता पूरी हो गई।

ईश्वर की वह शक्ति आपके पास भी कार्यरत है। यदि आप विश्वास करें तथा जानें कि समृद्धि भौतिक साधनों से नहीं अपितु ईश्वर से प्राप्त होती है, तो आप देखेंगे कि ऐसे ही है।

ईश्वर-सम्पर्क खोजें तो वे आपका मार्गदर्शन करेंगे

ईश्वर आपको यह नहीं कहते कि आप अपने लिये मत सोचो, न ही यह कि आपको अपनी पहलकदमी का प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं। आपको अपनी भूमिका निभानी ही होगी। बात यह है कि यदि आप गलत कार्यों एवं इच्छाओं तथा विश्वास एवं दिव्य सम्पर्क के अभाव द्वारा स्वयं को स्रोत से पृथक कर लेते हैं तो आप उनकी सर्वशक्तिसम्पन्न सहायता को प्राप्त नहीं कर सकते। परन्तु यदि अन्तर्सम्पर्क द्वारा ईश्वर का मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं तो वे आपकी उचित कार्य करने एवं गलतियों से बचने में सहायता करेंगे।

इसे प्रारम्भ करने की विधि है, प्रातः तथा सायंकाल में नियमित गहरा ध्यान। जितना अधिक ध्यान आप करेंगे उतना ही अधिक आपको

शिष्यों की कक्षाओं पर अपने प्रयासों को एकाग्रित किया तथा अधिकांशतः वे अपने सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप मन्दिरों तथा सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप अन्तर्राष्ट्रीय मुख्यालय में ही प्रवचन करते थे।

अनुभव होगा कि सामान्य चेतना के साम्राज्य के पीछे कोई वस्तु है जहाँ अत्यधिक शान्ति एवं सुख का शासन है। इस शान्ति एवं सुख के सान्निध्य का अभ्यास करें, क्योंकि यह ईश्वर सम्पर्क का प्रथम प्रमाण है। यह आपके भीतर सत्य की सचेत अनुभूति है। आपको इसी की आवश्यकता है। सत्य की पूजा करने की यही विधि है। क्योंकि हम जिसे जानते हैं उसी की पूजा कर सकते हैं।* अधिकाँश लोग ईश्वर को अज्ञेय वस्तु के रूप में पूजते हैं, परन्तु जब आप वास्तविक वस्तु के रूप में उन्हें पूजने लगते हैं, तो अपनी आन्तरिक अनुभूति द्वारा आप उनकी शक्ति की विद्यमानता को अपने जीवन में अधिकाधिक अनुभव करेंगे। और चाहे आप कुछ भी करें, जो ईश्वर-सम्पर्क गहरे ध्यान से उत्पन्न होता है वह और किसी वस्तु से उत्पन्न नहीं होगा। ध्यान-जनित आन्तरिक शान्ति तथा आनन्द को बढ़ाने के लिये तत्पर प्रयास ही ईश्वरानुभूति का एकमात्र मार्ग है।

ईश्वर से मार्गदर्शन के लिये प्रार्थना करने का समय, ध्यान के पश्चात् आन्तरिक शान्ति तथा आनन्द का अनुभव करने के बाद होता है; अर्थात् जब आप दिव्य सम्पर्क स्थापित कर लेते हैं। यदि आप सोचते हैं कि आपकी कोई आवश्यकता है तो आप इसे उस समय ईश्वर के सम्मुख रख सकते हैं और पूछ सकते हैं कि यह उचित प्रार्थना है या नहीं। यदि आप अन्तरात्मा में अनुभव करते हैं कि आपकी प्रार्थना न्यायसंगत है, तब प्रार्थना करें, "प्रभो, आप जानते हैं कि यह मेरी आवश्यकता है। मैं तर्क का प्रयोग करूँगा, मैं रचनात्मक बनूंगा, जो कुछ आवश्यक है, मैं करूंगा। आपसे मैं केवल यह माँगता हूँ कि आप मेरी इच्छाशक्ति तथा रचनात्मक योग्यताओं का उचित कार्यों की ओर मार्गदर्शन करें।"

ईश्वर के साथ न्यायपूर्ण बनें। हो सकता है उनके पास आपके लिये आपकी प्रार्थना की वस्तु से भी कुछ अच्छी वस्तु है। यह सत्य

* ईश्वर परमात्मा है तथा जो उनकी पूजा करते हैं उन्हें आत्मा तथा सत्य के रूप में ही उनकी पूजा करना अपेक्षित है।

है कि कभी-कभी आपकी अधिकतम भावप्रवण प्रार्थनायें तथा इच्छायें आपकी सबसे बड़ी शत्रु होती हैं। ईश्वर के साथ सत्य एवं न्याय से वार्तालाप करें, तथा आपके लिये क्या उचित है, इसका निर्णय उन्हें करने दें। यदि आप ग्रहणशील हैं तो वे आपका मार्गदर्शन करेंगे। आपके साथ कार्य करेंगे। यदि आप भूल भी करते हैं तो भी डरें नहीं। विश्वास रखें। यह जान लें कि ईश्वर आपके पास हैं। प्रत्येक वस्तु में उस शक्ति का मार्गदर्शन प्राप्त करें। यह निश्चित है। यह सत्य आप में से प्रत्येक पर लागू है।

सतत् गहरे ध्यान के अभ्यास से आप अन्ततः आन्तरिक अनुभूति की अधिचेतन अवस्था में जा सकते हैं तथा चेतन स्तर पर अपने सभी कर्तव्यों को करते समय उस अवस्था में रह सकते हैं। जब आप अधि-चेतना की अवस्था से कार्य करना सीख लेते हैं तथा प्रत्येक कार्य में दिव्य आन्तरिक आनन्द को बनाये रखते हैं तो आप ईश्वर की विद्यमानता तथा शक्ति को सदा अपने साथ अनुभव करेंगे।

मैं जैसा अनुभव करता हूँ, आप भी वैसा अनुभव कर सकें

मैंने उस ईश्वर का सन्देश आपको दिया है और मैं उसका महान प्रकाश आप सब में देखता हूँ। उस प्रकाश में मैं आपको आशीर्वाद देता हूँ। ईश्वर की सूक्ष्म शक्ति मेरे माध्यम से, मेरी वाणी से, मेरे मस्तिष्क से, मेरी कोशिकाओं से, मेरी चेतना के प्रत्येक तन्तु से प्रवाहित होती है। प्रत्येक विचार एक माध्यम है जिसमें से उसका प्रकाश गुज़र रहा है। अपने हृदय को खोलो तथा अनुभव करो कि वह दिव्य शक्ति आप में से गुज़र रही है। जैसे मैं अनुभव करता हूँ, आप भी कर सकें; जैसे मैं देखता हूँ, आप भी देख सकें।

धरती से स्वर्ग की ओर
(From Earth to Heaven)

श्री श्री दयामाता

जीवन तथा मृत्यु में शरीर से ऊपर उठना

सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप के अन्तर्राष्ट्रीय मुख्यालय, लॉस एन्जिलस में दिये गये सत्संगों का सारांश।

क्या यहाँ धरती पर स्वर्ग की प्राप्ति संभव है? अर्थात् एक ऐसे स्वर्ग में रहना जहाँ दुःख तथा रोग, द्वेष, क्रोध और कष्ट होते ही नहीं—जहाँ हमारे प्रियजनों की, मृत्यु द्वारा, कष्टप्रद हानि नहीं होती? ऐसे स्वर्ग के मार्ग को खोज निकालने का मात्र एक ही साधन है, और वह है शरीर के साथ एकरूपता पर नियन्त्रण पाना।

गुरुदेव परमहंस योगानन्दजी ने ऐसे नियन्त्रण को प्राप्त करने के लिए हमें अनेक विधियों की शिक्षा दी। उदाहरणार्थ, कभी-कभी जब हम उनके साथ ध्यान में बैठते, तो वे हमसे उनके द्वारा सिखलाई गई चेतना को अन्तर्मुखी करने वाली योग विधियों का गहनतापूर्वक तब तक अभ्यास करवाते जब तक कि हम शान्ति में तल्लीन न हो जाते।* तब वे हमसे कहते, "अब अपना मन वापस शरीर में लाओ। हृदय-स्पंद, पेशियों, स्नायुओं, इन्द्रियों के प्रति सचेत हों। अब एक बार पुनः मन को शरीर से परे ले जाओ और अपने अन्तर शान्ति के महासागर में, जिसे आपने अभी छोड़ा था, पुनः गहराई से डुबकी लगाओ। आप वही शान्ति के महासागर हैं; आप शरीर नहीं हैं। जिस प्रकार एक सागर की बूँद उसी पदार्थ से बनी है जिससे कि स्वयं सागर, उसी प्रकार आपकी

* परमहंस योगानन्द जी की योग विधियाँ योगदा सत्संग पाठमाला पाठों में सिखलाई जाती हैं।

आत्मा, ईश्वर का एक पृथक हुआ भाग होने के नाते, उसी शान्ति, आनन्द, प्रेम तथा ज्ञान से बनी है जो ईश्वर के स्वरूप हैं।"

जितना अधिक हम नश्वर चेतना को दूर करेंगे और स्वयं को अनश्वर आत्मा के रूप में देखेंगे, उतना ही अधिक हम उस अवस्था का बोध प्राप्त करेंगे, जिसमें पीड़ा, रोग और मृत्यु का कोई अर्थ नहीं रह जाता। गहराई से किये गये ध्यान के बाद आप अपने शरीर को देखकर वस्तुतः अनुभव कर सकते हैं: "यह मैं नहीं हूँ। यह मात्र एक खोल है जिसमें मैं अस्थायी रूप से रह रहा हूँ।" किसी दिन आपको इस खोल को त्यागना पड़ेगा। परन्तु देवत्व की चिनगारी जो वास्तव में आप हैं—अर्थात् आत्मा, जब उस समय नश्वर शरीर जीवन को और अधिक समय पकड़े नहीं रख सकता, मरती नहीं है। शरीर से मुक्त होकर, आपकी आत्मा एक अत्यधिक आश्चर्यजनक अस्तित्व को प्राप्त करती है।

मैं इस जीवन तथा परलोक के बीच प्रवेश द्वार पर खड़ी रह चुकी हूँ, और मैं जानती हूँ कि मृत्यु क्या है। जब इस तुच्छ शरीररूपी पिंजरे का द्वार खुलता है और आत्मा उड़ जाने के लिए मुक्त होती है, तब कोई भय या दुःख अथवा पीड़ा नहीं रहती। सभी दुःख लुप्त हो जाते हैं। एक ऐसे उल्लास का अनुभव होता है, "ओह, कितनी स्वतन्त्रता! मैं कैसे प्रकाश और सुन्दरता तथा आनन्द के भव्य जगत में प्रवेश कर रहा हूँ।"

उस दैवी स्वच्छन्दता को अनुभव करने के लिए मृत्यु की प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं; शारीरिक चेतना से ऊपर उठने की विधि सीखकर हम इसे अभी प्राप्त कर सकते हैं। हम गुरुजी को प्रायः समाधि, अर्थात् दिव्य चेतना में देखते थे, जिसमें शरीर का बोध तथा इसकी अक्षमताएं, परमात्मा के अनन्त आनन्द में पूर्णतया लुप्त हो जाते हैं। यह है वह मुक्ति जिसे गुरु तथा संत सिद्ध करते हैं। यद्यपि वे एक शरीर में रहते हैं, परन्तु अब उनकी चेतना शरीर, तथा इसकी कामनाओं तथा तृष्णाओं, धन की स्वार्थी अभिलाषाओं, ख्याति, व्यक्तिगत यश तथा शक्ति के अधीन नहीं है। ध्यान द्वारा, और शरीर तथा सांसारिक सम्पत्ति

से अनुरक्त न होने के अभ्यास द्वारा, उन्होंने उन बेड़ियों को जो आत्मा को मांस के कारागार में बंद करती है, तोड़ दिया है।

शरीर के प्रति संतुलन

यदि आप उस उच्चतर चेतना को ग्रहण करना चाहें तो शरीर की मांगों पर अत्यधिक ध्यान न दें। इसकी मांगों पर नियंत्रण के अभ्यास को तितीक्षा कहते हैं जिसका योग तथा गीता शिक्षण देते हैं, और जिसके विषय में जीसस ने अपने अनुयाइयों को प्रेरणा दी थी: "अपने जीवन के प्रति ध्यान न दें कि आप क्या खायेंगे, या आप क्या पीयेंगे, और और न ही शरीर के प्रति कि आप क्या पहनेंगे। क्या जीवन आहार से उच्चत्तर नहीं है और शरीर वस्त्र से उच्चत्तर नहीं है?* हाँ, हमें अच्छे स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए जो कुछ तर्कसंगत आवश्यकता है, उसे अवश्य ही पूरा करना चाहिए, क्योंकि यदि शरीर कोई बाधा नहीं डालता, तो ध्यान तथा अन्य आध्यात्मिक आचरणों का पालन अधिक संरल हो जाता है। परन्तु हमें स्वयं से अधिक लाड़-प्यार नहीं करना चाहिए, इसके स्थान पर हमें अपने मन को सुदृढ़ करना चाहिए। अपनी पीड़ा और क्लेश के विषय में शिकायत करना हमारे मन को उनपर और भी अधिक केन्द्रित करता है।

यदि शरीर में कोई कष्ट हो तो उससे छुटकारा पाने के लिए सामान्य बुद्धि की विधियों का प्रयोग करें, परन्तु यदि वह न हटे तो इसे अपने आध्यत्मिक प्रयासों को त्यागने का बहाना न बनने दें। यदि ध्यान में बैठते समय शरीर को असुविधा हो तो तकिये पर बैठें, परन्तु यदि तकिया प्राप्त करना भूल जाएं तो अपने मन को उसी स्थिति में ध्यान करने का आदेश दें। अपने ध्यान को, शरीर विषयी सभी विचारों से दूर कर कुटस्थ† पर केन्द्रित करें और दृढ़निश्चय कर लें कि आप किसी

* मैथ्यु 6:25

† दिव्य चेतना तथा दिव्य ज्ञान की एकमात्र चक्षु का स्थान जो दोनों भृकुटियों के मध्य में स्थित है; शरीर में एकाग्रता तथा इच्छाशक्ति का केन्द्र है।

भौतिक हस्तक्षेप को ईश्वर के प्रति अपनी खोज में बाधा नहीं डालने देंगे। मन के संतुलन का अर्थ स्वयं को प्रत्येक नकारात्मक स्थिति से अप्रभावित रखना है : इस प्रकार दृढ़ निश्चय वाले भक्त को ईश्वर उत्तर देते हैं, "हे मेरे बच्चे, तुम वास्तव में मुझे चाहते हो। तुमने अपनी खोज की सच्चाई से मेरे मन को छू लिया है।"

अहंमन्य भावनाएं हमें शरीर से बद्ध करती हैं

मुक्त होने के लिए हमें अहंमन्य आवेगों को भी, जो हमें शरीर के साथ बद्ध करते है, त्यागना होगा। जब हम स्वयं को क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष अथवा किसी अन्य आवेगपूर्ण खलबली की स्थिति में फंसने देते हैं, तो हम अहं की पकड़ को मजबूत बना देते हैं, जो क्रमशः हमारी चेतना को संकुचित कर देती है। अपने साथियों के विरुद्ध शिकायत करना कितना सहज है, यह कहते हुए, "उसे मेरे साथ ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए"; "वह मेरे साथ इस प्रकार बोलने का साहस कैसे कर सकती है ?" परन्तु आध्यात्मिक विधि प्रत्येक वस्तु को समभावना से स्वीकार करना है भले वह दूसरे के द्वारा दुर्व्यवहार ही हो। कोई हमें क्या कहता या करता है उससे हम ईश्वर तथा अपने अन्तरात्मा के सामने क्या हैं, इसमें कोई वास्तविक अन्तर नहीं पड़ता। कष्टदायक अनुभव वास्तव में हमें यह स्मरण करने में सहायक होते हैं कि हमारा "राज्य इस जगत का नहीं है।"

जब कोई वस्तु आपको अशान्त या निराश करे तो आवेगपूर्वक उसकी प्रतिक्रिया न करें। ध्यान में ईश्वर के पास जायें और अपने हृदय को बारम्बार अर्पित करें : "जगन्माता, मैं आपको, केवल आपको चाहता हूँ। आज मैं इस घटना से अशान्त हो गया हूँ। परन्तु जगन्माता, मैं जानता हूँ ये बातें वास्तव में कोई अर्थ नहीं रखतीं। मैं यहाँ पर जीवन की इस पाठशाला में अपने अहं पर विजय पाना सीखने आया हूँ और ये अनुभव मेरी शिक्षा का अंश मात्र हैं। वे मुझे यह याद दिलाने के लिए आते हैं कि मेरा जीवन एकमात्र आप ही के लिए उत्तरदायी है। मात्र आप

ही मुझे वह मुक्ति प्रदान कर सकती हैं जिसके लिये मेरी आत्मा लालायित है। केवल आप ही मुझे वह प्रेम दे सकती हैं जो मेरे हृदय की आकांक्षाओं को पूर्णतः तृप्त कर सकता है। इसे कोई भी मनुष्य कोई भी सांसारिक प्रेमी अथवा मित्र मुझे नहीं दे सकता। मुझे दर्शन दो! आप स्वयं को मेरे सामने प्रकट करो!"

जब आप ईश्वर के प्रति एकाग्रचित्त लालसा के साथ आकाश का मंथन करते है तो चेतना अन्तर्मुखी होना आरम्भ करती है और क्रमशः आप पाते हैं कि शरीर अपनी पीड़ाओं तथा कष्टों, चंचलता और अभिलाषाओं तथा आन्दोलित आवेगों के साथ आपके वोध का केन्द्र अव नहीं रहा है। आपका सम्पूर्ण अस्तित्व ईश्वर के लिए लालसा से प्रज्वलित है। आप ईश्वर के प्रेम, शान्ति तथा आनन्द का; जो सदैव आपकी आत्मा के अन्दर विराजमान हैं, रसास्वादन ले रहे होते हैं। शरीर पर विजय पाने का यही अर्थ है, और यह है इस जगत से अनासक्त रहने का फल।

आपकी इच्छा पूर्ण हो, न कि मेरी

किसी भी वस्तु से आसक्त न हों। इस संसार में आपको ईश्वर द्वारा प्रदान की गई वस्तुओं का आभार मानें, जब तक वे आपके पास हैं उनका आनन्द लें, परन्तु जब कोई वस्तु आपसे छीन ली जाती है तो उसकी हानि से अशान्त न हों। इन विचारों को दृढ़ता से कहने के अभ्यास द्वारा अनासक्ति का विकास करें, "हे प्रभो, आपकी इच्छा पूर्ण हो, मेरी नहीं, क्योंकि मैं इस जगत में आपको प्रसन्न करने के लिए हूँ। मैं इस शरीर को भोजन तथा देखभाल, इसके लोभ तथा अभिलाषाओं को तृप्त करने के लिए नहीं करता, अपितु इसलिए कि यह आपकी उच्चत्तर सेवा कर सकें। मैं इन कार्यों को अपने लाभ के लिए या दूसरों से प्रशंसा प्राप्त करने के लिए नहीं करता प्रत्युत आपकी कृपा-दृष्टि तथा प्रसन्नता की प्राप्ति के लिए करता हूँ। अपने जीवन के सभी अनुभवों में आपके साथ दृढ़निश्चय से चिपके रहने से मैं जानता हूँ कि मैं वांछित परितोष को प्राप्त करूँगा।"

इन सत्यों में लीन रहने से आप शरीर की ललकों तथा आसक्तियों से स्वयं को अलग करना सीखते हैं। तब मृत्यु के समय, जब ईश्वर शरीर को, जिसमें नश्वर मानव अत्यधिक आसक्त होते हैं, छीन लेता है, तो आप दुःखी नहीं होंगे, क्योंकि ध्यान तथा आन्तरिक अनासक्ति द्वारा शरीर से ऊपर उठने का अभ्यास आप पहले से ही कर रहे होते हैं। आपको ज्ञात होगा कि मृत्यु का अर्थ ईश्वर की उच्चतम अत्यधिक आनन्दमय चेतना में प्रवेश करना है, और आप प्रसन्नतापूर्वक अपने जीवन को ईश्वर के कर-कमलों में देने योग्य होंगे।

प्रियजनों की मृत्यु से निपटना

मृत्यु एक आनन्दमय अनुभव है। यह एक दण्ड कदापि नहीं हो सकती, क्योंकि यह सबको आती है, चाहे वह एक संत हो अथवा एक पापी। अनेक बार आप और मैं इस जगत में आये हैं, और अनेक बार हम इससे विदा हुए हैं।* वे गत जीवन हमें स्मरण नहीं रहते। और यह महत्त्वपूर्ण नहीं है कि हम उन्हें जानने का प्रयास करें। स्मरण रखने की बात यह है कि हममें से प्रत्येक व्यक्ति मृत्यु के अनुभव को असंख्य बार अनुभव कर चुका है और इससे भयभीत होने का कोई कारण नहीं है। जैसे कि गुरुजी ने सिखाया है, हमें मृत्यु को इतना स्वभाविक रूप में लेना चाहिए जितना एक नये वस्त्र को पहनने के लिए पुराने वस्त्र को उतार फेंकना।

हम मृत्यु तथा अपने प्रियजनों से विदा होने से इसलिए डरते हैं कि हम स्वयं को शरीर के रूप में सोचते हैं। ईश्वर कृपा से मैं, जब मेरे गुरु ने भौतिक शरीर का त्याग किया, उपस्थित थी। मैंने गहनतम अनुभूति

* पुनर्जन्म की ओर एक संकेत, एक सिद्धान्त कि मानव क्रमविकास के नियम द्वारा वाध्य हो वारम्वार उत्तरोत्तर उच्चत्तर जीवनों में (गलत कार्यों तथा आकांक्षाओं द्वारा विलम्बित और आध्यात्मिक प्रयासों द्वारा विकसित) पुनर्जीवन लेता है, जब तक वह आत्मानुभूतित या ईश्वर से एकाकार नहीं कर लेता। इस प्रकार नश्वर चेतना की परिसीमनों तथा अपूर्णताओं को पार कर, अनिवार्य पुनर्जन्म से सदैव के लिए मुक्त हो जाता है।

प्राप्त की कि किसी प्रियजन द्वारा अपने शरीर का त्याग एक और शरीर को प्राप्त करने के लिए होता है तो विलाप करना कितनी मूर्खता है। जैसे ही मैं गुरुजी के पहलू में झुकी, यह जानते हुए कि उनकी आत्मा इस शरीर को छोड़ चुकी है, तो मैं अत्यधिक उनके जीवंत सान्निध्य को अनुभव कर सकी। ऐसा प्रतीत हुआ जैसे कि वे हमारे पास खड़े यह कह रहे हों, "जो कुछ इस शरीर के साथ घटा है तुम उसपर शोक न मनाओ। मैं वहाँ पर नहीं हूँ। मैं सदैव तुम्हारे साथ हूँ, मेरे साथ सम्पर्क बनाये रखो और तुम निरंतर मेरी निर्देशक उपस्थिति को अनुभव करोगी।" मुझे इस निष्ठा की आवश्यकता नहीं कि गुरुजी मेरे साथ हैं। मैं इसे अपने प्रत्यक्ष अनुभव से जानती हूँ।

मैंने अनेक प्रियजनों की, जो शरीर त्याग गये हैं, समीपता का भी अनुभव पाया है, जिनमें मेरी माता, श्यामा माता भी सम्मिलित हैं। मैंने बारम्बार देखा है कि जुदाई का अस्तित्व ही नहीं है। यद्यपि वे अदृश्य हैं, वे सदैव मेरे साथ हैं। दिवंगत आत्माओं से वार्तालाप के लिए शब्दों की आवश्यकता नहीं। उनको प्रेम तथा सूझ-बूझ के स्पन्दन भेजें, यदि आवश्यकता हो तो क्षमादान के स्पन्दन।

किसी प्रियजन को खो बैठने के समय ध्यान में बैठें। योगदा विधियों का तब तक अभ्यास करें जब तक कि आप शान्ति की एक नदी को स्वयं में प्रवाहित होते अनुभव न करें। फिर आप अपने मन को उस खोये व्यक्ति पर केन्द्रित करें। उसका मानसदर्शन करें और उसे अपना प्रेम बारम्बार भेजें। प्रेम का स्पन्दन इस सीमित जगत से परे पहुँच जाता है और जहाँ कहीं भी वह आत्मा हो, उसे छूता है। जब वह ग्रहणशील होता है वह उस प्रेम को, जो आप उसे भेजते हैं, अपनी निजी चेतना के अन्दर एक महान भावोद्‌गार के रूप में अनुभव करता है।

यह ठीक है कि अपने एक प्रियजन को खोने पर दुःख का होना स्वभाविक है। हमें इसे अन्तर में यह सोचकर नहीं रोकना चाहिए कि शोक मनाना उचित नहीं। यह जीवन का एक अंश है, यह स्वाभाविक है। परन्तु उस दुःख को स्वयं को नष्ट करने की अनुमति न

दें। कभी-कभी लोग वर्षों तक शोक मनाते रहते हैं। शोक के लिये समय दें, परन्तु फिर शोक व्यक्त कर लेने के बाद अपनी चेतना को ऊपर उठायें और जीवन को, यह अनुभव करते हुए कि आप उस प्रियजन को पुनः मिलेंगे, चलने दें।

ऐसा कभी अनुभव न करें कि जिसे आपने गहन प्रेम किया है वह सदैव के लिए चला गया है। ऐसा कदापि नहीं होता। जब आप इस जीवन से पार, दूसरे जगत में गमन करते हैं, तो उन प्रियजनों को, जो आपसे पहले वहाँ चले गये हैं, आपके स्वागत की प्रतीक्षा में पायेंगे। और किसी भविष्य के जीवन में वे आत्माएं अपने अपने कर्म की रूप-रेखानुसार एक बार फिर प्रेम की चुम्बकीय शक्ति द्वारा आपके जीवन पथ में खींचे चले आयेंगे और आप एक दूसरे को पहचान लेंगे। आप में से अनेक को किसी से पहली बार भेंट से यह अनुभव हुआ है, "मैं नहीं जानता यह क्या है, परन्तु मुझे अनुभव होता है कि मैंने इस व्यक्ति को सदैव जाना है।" ऐसा क्यों? गत में किसी समय आप तथा उस आत्मा में घनिष्ठ मित्रता थी। इस जीवन में आपको उस सम्बन्ध के सूत्रों को चुनने तथा बनाये रखने का अवसर प्राप्त हुआ है। और ऐसा ही उन सबके साथ होगा जिन्हें आप इस जीवन में सच्चा प्रेम करेंगे।

मरणासन्न व्यक्तियों को आशा प्रदान करें

जब कोई प्रियजन अस्वस्थ हो और मरने की स्थिति में हो तो उसकी उपस्थिति में कदापि न कहो, "यह निराशाजनक है।" इसके प्रभावों का ज्ञान युवा अवस्था में मेरे एक अनुभव से मुझे प्राप्त है। एक चिकित्सक ने मेरे एक रोग की चिकित्सा के समय ऊँचे स्वर में कहा था कि वह मेरा अन्त समय हो सकता है। मैं व्यक्त नहीं कर सकती कि उससे मेरी चेतना को कितना धक्का लगा। यदि किसी को अंतिमता के विषय में अवश्य ही कुछ कहना हो तो इसे रोगी की श्रवण सीमा के अन्दर कभी नहीं कहना चाहिए, चाहे वह मूर्छित भी

प्रतीत पड़ता हो। क्योंकि श्रवण इन्द्रिय अन्त में समाप्त होती है। जब तक वह जीवित हो, उसे आशा की भावना प्रदान करनी चाहिए। (यह कपट नहीं है। हमें लोगों को सदैव प्रोत्साहित करना चाहिए, और विशेष रूप से जब वे रोगग्रस्त हों)। उससे ईश्वर, कृष्ण या क्राईस्ट या किसी एक गुरु के विषय में बातचीत करें, उसे अपने मन को ईश्वर पर केन्द्रित करने का आग्रह करें। यह उसे शान्त होने में सहायक होता है।

धर्मग्रन्थों में कहे गये उस कथन को स्मरण रखें: "ईश्वर की दृष्टि से बाहर कुछ नहीं होता।" दूसरे शब्दों में, हमारे साथ जीवन तथा मृत्यु में चाहे कुछ भी होता है, हम अपने परमप्रिय ईश्वर की सुरक्षक दृष्टि से कभी भी ओझल नहीं होते। हम इस जगत में सम्पूर्ण रूप से उसके आश्रयदायक प्रेम के संरक्षण में आते हैं। तथा इस लोक से परलोक में जाते समय वह प्रेम हमारे पास रहता है। सर्वत्र अनन्तता में उसकी सर्वव्यापी देखभाल के परे हम कभी भी नहीं जा सकते।

यह अनुभव करना कि न केवल मृत्यु के ही समय, परन्तु अपने सम्पूर्ण जीवन में हम ईश्वर के कितने पास हैं, कितना महान आनन्द तथा आश्वासन है। वह एक श्वास की दूरी पर ही हैं, ठीक इस छोटे से हृदय की धड़कन के पीछे, ठीक जीवन के सभी सरकते दृश्यों के पीछे। ध्यान तथा अनुरक्तिरहित रहन से जब हम शरीर की बद्धता से ऊपर उठते हैं, तो जो पर्दा पृथ्वी तथा स्वर्ग को विभाजित करता है, क्रमशः गिर जाता है जब तक कि हम इस जीवन में तथा परलोक में, ईश्वर के साथ अपने अनश्वर एकत्व का निरंतर बोध प्राप्त नहीं कर लेते।

उमर ख़य्याम की रुबाईयाँ
(Rubaiyat of Omar Khayyam)

एडवर्ड फिट्ज़जेराल्ड कृत अंग्रेज़ी अनुवाद पर आधारित
श्री श्री परमहंस योगानन्दजी द्वारा आध्यात्मिक व्याख्या

75

And when Thyself with shining Foot shall pass
Among the Guests Star-scatter'd on the Grass,
And in Thy joyous Errand reach the Spot
Where I made one—turn down an empty Glass!

शब्दावली—*Thyself with shining foot shall pass*: विस्तृत आत्मा—सम्पूर्ण सांसारिकता प्रकाश में रुपान्तरित होने पर—सर्व-व्यापकता को अनुभव करेगी। *Among the guests star-scatter'd on the grass*: सूक्ष्म मानसदर्शन आत्माओं के इस धरती के हरे गोलक की सीमाओं में बिखरे, विभिन्न शरीरों में चमकते हुए देखता है। *Joyous errand*: एक मुक्त आत्मा द्वारा मानव-जाति के प्रति की गई प्रेमपूर्ण सेवा। *The spot where I made one*: ईश्वर चेतना, जिसमें "मैं" अर्थात सीमित अहं, सर्वव्यापकता से एकरूप हो जाता है। *Turn down an empty glass*: जब भी एक और मानव परमात्मा में अन्तिम शरण प्राप्त करता है तो विश्व में एक अहं कम हो जाता है।

आध्यात्मिक व्याख्या

हे भक्त, एक समय आएगा जब कि आपकी आत्मा अपनी सम्पूर्ण

स्थूलता को त्याग देगी तथा शाश्वत प्रकाश बन जायेगी, जो नित्य प्रज्वलित रेडियम की भाँति असीम आनन्द एवं ज्ञान को उत्पन्न करेगी। आपकी आत्मा करोड़ों अस्थायी अतिथियों वाले भौतिक संसार के पीछे देदीप्यमान सूक्ष्म क्षेत्र में जाते हुए उन सभी धरती पर रहने वालों को आशीर्वाद देगी जिनमें से यह गुज़रेगी तथा अन्तरात्मा की आवाज़ों से उन्हें झकझोरती तथा जगाती जाएगी। जब आपकी आत्मा का तुच्छ आनन्द परमात्मा के असीम आनन्द में रूपान्तरित होता है, यह सभी अनुक्रियाशील, सत्यान्वेशी हृदयों में से एक मुक्तिकारक गीत की गूंज करता है। आपकी स्वच्छन्द आत्मा अन्त में सर्वव्यापकता की अपारता, ईश्वर-चेतना के मूल तक पहुँच जाती है, जिसमें तुच्छ, शरीर-सीमित अहं नष्ट हो जाता है। वह शाश्वत अभिन्नता में विस्तृत हो जाता है। इस प्रकार अज्ञानता-रूपी ढकने के हट जाने से, आपकी मुक्त आत्मा, जो आप में ईश्वर का प्रतिबिंब है, अब तक सीमित करने वाली, अपने भौतिक तथा सूक्ष्म शरीर-रूपी बोतलों से बाहर निकलेगी तथा जिस परमात्मा के अनन्त सागर में वह लम्बे समय तक एक माया से घिरी पृथक सत्ता के रूप में रही है उसके साथ सदा के लिये मिल जायेगी।

"तब ही मदिरा के भ्रमित-जीवन रूपी गिलास को, जो अपने आत्मा-रूपी सार से खाली हो चुका है, तथा फिर कभी भी माया के बल से नहीं भरा जायेगा, अब तथा सदा के लिये गिराया जा सकता है।"

व्यावहारिक उपयोगिता

कोई व्यक्ति जीवन की दैनिक समस्याओं को पूर्णरूप से समझता है या नहीं, इसका कोई महत्त्व नहीं। महत्त्वपूर्ण है, सच्चे सुख अर्थात आनन्द की, जो व्यक्ति के अस्तित्व का मूल है, खोज में दृढ़ होना। शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक रूप से अपनी पूर्ण शक्ति के विकास द्वारा नश्वर अनश्वर हो जाता है। जो सतत अन्तरात्मा के संकेत तथा ऋषियों के परामर्श का पालन करता है तथा जो अपने ज्ञान तथा मुस्कानों के एकत्रित धन को अज्ञानी मनुष्यों में बाँटता है, वह ईश्वर-साक्षात्कार

प्राप्त कर लेता है। वह अपने भीतर छुपे प्रकाश को देखने की खोज करने वाले अन्य व्यक्तियों के लिये एक प्रेरणा तथा उन्नति प्रदान करने वाला है।

हे नश्वर प्राणी, ज्ञानवान उमर खय्याम की पुकार को सुन। सतत चेष्टा करना तेरा दिव्य भाग्य है, जब तक कि वह आन्तरिक उच्च अवस्था प्राप्त न हो जाये जिसमें अहं, शरीर चेतना, धर्ममत तथा वंश की सभी मानसिक सीमारेखाओं को पार कर लेता है; तथा आत्मा रूप में सम्पूर्ण जीवन के साथ सार्वभौमिक भ्रातृत्व में विलीन हो जाता है, और फिर एकमात्र जीवन (ईश्वर) के साथ शाश्वत अभिन्नता प्राप्त करता है।

इस प्रकार इस अन्तिम रुबाइयात चतुष्पदी में जीवन के चरम उद्देश्य का उत्कृष्ट वर्णन किया गया है।

परमहंस योगानन्द जी के वचनामृत

"सारी वासनाओं को नष्ट कर दो; अहंभाव से मुक्ति पाओ—यह सब मुझे बड़ा नकारात्मक लगता है, गुरुदेव", एक शिष्य ने कहा, "यह सब छोड़ देने पर मेरे पास बचेगा क्या ?"

गुरुदेव ने उत्तर दिया—"वास्तव में—सब कुछ—क्योंकि तुम आत्मा के धनी हो जाओगे जो सार्वभौम पदार्थ है। तब तुम रोटी के एक टुकड़े और कुछ शारीरिक सुख से भ्रमित एक भिखारी न रहकर, उस अनन्त पिता के पुत्र का उच्च स्थान फिर से पा लोगे। यह कोई नकारात्मक स्थिति नहीं है।" उन्होंने आगे कहा—"अहंभाव का त्याग सत्य आत्मा को प्रभावशाली बनाना है। दैवी अनुभूति ऐसी अवस्था है, जिसकी व्याख्या असम्भव है; क्योंकि इससे अन्य किसी भी वस्तु की तुलना नहीं की जा सकती।"

हे परमात्मन् !
किसी समय कहीं पर हम पहले मिले थे

(O Spirit!
Sometime, Somewhere, We Met Before)

श्री श्री परमहंस योगानन्द

परमहंस जी द्वारा लिखित यह प्रेरणा इस रहस्यपूर्ण यथार्थता के विषय में कहती है कि यद्यपि सभी वस्तुएं मूलरूप से परमात्मा को एकाकी चेतना हैं, तथापि माया-भ्रम के जादू से, सृष्टि के सभी विकासशील रूप सचेत अथवा अचेत रूप में, अपने स्रष्टा से पृथक एक व्यक्तिगत जीवन का स्वप्न देखते हैं। जागृत हो रही आत्मा अपने पृथक व्यक्तित्व की स्मृतियों के स्वप्न-जाल पर तीक्ष्णता से विचार करती है और साथ ही साथ अपने सहचारी प्रतिबिंबों को परमात्मा के अतिरिक्त और कुछ नहीं समझती।

किसी समय, कहीं पर, हम पहले मिले थे : शायद नीहारिकाओं के वक्षस्थल में दो चिनगारियाँ, अथवा एक उत्तेजित सागर में भिन्न बुदबुदे, या सागर की विशालता के शीतल नीले जल में खेल रहे साथी जल-स्थलचर, अथवा सागर पर दौड़ते उड़न मछली रूप भाई, या वायु की महातरंगों पर उछलते, पंख फैलाये पंछी, अथवा अकेले तने के आलिंगन में मिले दो पुष्प, या धरती की गुप्त लता-कुंज में प्रेम में जकड़े लाल रंग के माणिक, अथवा सूर्य तथा चन्द्र, ज्ञान एवं कोमलता, ब्रह्माण्डीय

अनन्तता के दो नेत्र; अथवा आनन्द तथा प्रेम, जीवंत सत्य के हृदय के दो कक्ष; अथवा जीवन के पोषण हेतु प्रेम जनित स्वच्छ ओस कण में मिलकर एक हुए हाइड्रोजन (H_2) तथा आक्सीजन (O); अथवा जाली-युक्त परमाणु में इलेक्ट्रॉन तथा प्रोटॉन, अथवा परमात्मा के दोनों ओर फड़फड़ाते दो आत्मारूपी पंख, अथवा शैतान के ज्ञानरूपी मुख में भूतपूर्व गुप्त सत्य को फुंकारती हुई, द्वन्द्वता की निष्कपटता की दो कांटे वाली जिह्वा, अथवा प्रकाश के एक ही प्रज्वलित स्रोत से आकाश की ओर भागती दो ज्वालाएं, अथवा फेन के दो गोलक जो एक मित्रता के इन्द्रधनुष रूपी गोले में फेंके गये हैं, अथवा प्रेम-सागर में मिली जीवनरूपी दो नदियाँ।

हे ईश्वर, आप मेरे हृदयरूपी म्यान में छुपी वह पवित्र खड़ग हैं जो अज्ञानरूपी राक्षसों की हत्या करने हेतु निकाली जायेगी।

चाहे आप मुझे जीवन की एक सचेत लहर बना दें, जो आपके सागररूपी वक्षस्थल पर सुखपूर्वक खेलती अथवा विश्रामरूपी वक्षस्थल में सोती है, परन्तु हे ईश्वर, मैं कदापि आप से विलग नहीं हो सकता।

सृष्टि की छाया के नीचे हम बहुत बार मिले तथा अलग हुए हैं। और पुनः कभी, किसी जगह, स्वप्नों के इस छोर पर अथवा जीवन पार के छोर पर। पुनर्जन्म द्वारा प्राप्त प्रत्येक जीवन, समय के जलते अंगारों पर क्षणमात्र के लिये ठहरने वाले ओसकण की भाँति है। हे मेरी आत्मा और परमात्मा, अब प्रतीक्षा क्यों? जब कि अभी हम चिरस्थायी अभिन्नता के सागर-समान हृदय में मिलकर द्रवित हो सकते हैं।

परमहंस योगानन्द जी के वचनामृत

एक अभ्यागत ने पूछा—"क्या आपकी शिक्षा से आपके शिष्य मन की शान्ति पा लेते हैं?"

योगानन्द जी ने उत्तर दिया—"अवश्य, किन्तु वह मेरा मुख्य उपदेश नहीं है। प्रभु के संग पूर्ण शान्ति से रह पाना ही श्रेष्ठ है।"

श्री श्री परमहंस योगानन्द जी के
बोध वचन

ससीम से निःसीम की ओर
(Breaking the Boundaries of Limitations)

हमारे ससीम मन ईश्वर के सर्वशक्तिमान मन का एक अङ्ग है। हमारी चेतनारूपी लहर के नीचे ईश्वरीय चेतना का अगाध समुद्र है। क्योंकि लहर यह भूल जाती है कि वह समुद्र का एक अभिन्न अङ्ग है, इसीलिये तो वह सागर की अपार शक्ति से असम्पृक्त हो जाती है। परिणामस्वरूप हमारे मन सतत संघर्षों एवं भौतिक सीमाओं के कारण अशक्त हो गये हैं। मन ने अपने व्यापार को बन्द कर दिया है। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि यदि आप मन पर लगाई गई सीमाओं से उसे मुक्त कर दें तो यह कितना कुछ कर सकता है। आपको मन के सीमा-बन्धनों से मुक्त होने के लिये निरन्तर प्रयास करना चाहिये।—*योगदा सत्संग*

प्रत्येक व्यक्ति जो संसार में जन्म लेता है, उसके भीतर जीवन की एक सामान्य रूप-रेखा होती है और उसके विस्तृत विवरणों को वह आजीवन उसमें भरता रहता है। जन्म के समय उस रूप-रेखा में प्रमुख मार्ग और कुछ उपमार्ग पहले से ही होते हैं। ये वे विशेषताएं हैं जिन्हें वह पूर्वजन्मों के संचित संस्कारों द्वारा अपने साथ ले आता है। उन्हें अपने मौलिक स्वभाव के रूप में स्वीकार करता है। तब उन गुणों को मनुष्य अन्य उपमार्गों से जोड़ता है और कुछ अतिरिक्त उपमार्गों को विन्यस्त भी करता है। कभी-कभी वह अपने प्रमुख मार्गों को उनकी मूलभूत सीमाओं से परे, दूर तक विस्तारित भी करता है, यदि उसमें

वास्तविक सक्रिय कर्मशक्ति हो। यदि उसमें इस क्रियाशीलता का अभाव हो तो वह जन्मकालिक मानचित्र पर निर्मित सीमित भूलभुलैया में ही अधिकाँश घूमता रहता है; और थोड़े से नये रास्तों पर भी चलता है जिन्हें वर्तमान दैनिक जीवन में उसने अपनाया है। वह और अधिक अग्रसर नहीं होता। वह एक सामान्य जीव है। पर इस सामान्यता की परिधि में वह सदैव आवद्ध नहीं रहेगा। वह सदैव सामान्य ही नहीं बना रहेगा। उसे अपना विस्तार तो करना ही होगा। उसे नये परिवेश में भी तो पदार्पण करना होगा। इस ब्रह्माण्ड के क्रमविकास का नियम उसे चैन नहीं लेने देगा।—*योगदा सत्संग*

ससीम विचार प्रणालियों को त्याग दो

इस संसार में हम अपने विचारों की परिधि में सीमित हैं। अपने विचारों का पक्षपाती होना हमारे लिये स्वाभाविक है; पर इस पक्षपात के कारण हम सामान्यतः यह पहचान नहीं पाते कि दूसरे लोगों के विचार विशाल एवं श्रेष्ठतर हो सकते हैं। जब हम निष्पक्ष होना शुरु करते हैं और किसी वस्तु के विषय में हठाग्रह नहीं करते तो हमारी सूझ-बूझ और ज्ञान का विकास हो जाता है।—*Man's Eternal Quest*

अपनी अनन्त प्रकृति, परिवर्तनरहित आत्मा से तादात्म्य स्थापित करो

जो मन सदैव शरीर के विषय में सोचता रहता है वह शरीर के द्वारा सीमित हो जाता है। और अनन्तध्यायी मन स्वयं भी असीम हो जाता है। ध्यान वह कला है जिससे हम अपने मन को ससीम वस्तुओं, जैसे तुच्छ शरीर तथा प्रदेश के भागों से, जिसमें प्राणी रहते हैं, हटाकर असीम में स्थानान्तरित करते हैं।—*योगदा सत्संग*

अपने व्यक्तित्व को व्यापक बनाओ

यह सत्य है कि यदि आप अपने आपको अपने वर्तमान व्यक्तित्व से एकरूप करके उसकी सीमाओं को स्वीकार न करें तो आप कुछ भी

करने में समर्थ हैं। जब आप मुझे बतलाते हैं कि आप अमुक कार्य नहीं कर सकते, मुझे तनिक भी विश्वास नहीं होता। ज्योंही आप कोई कार्य करने का संकल्प कर लेते हैं, आप में करने की क्षमता भी आ जाती है। परमात्मा प्रत्येक वस्तु का समुच्चय है, और उस ईश्वर का प्रतिबिम्ब आपके भीतर विद्यमान है। जब वह सर्वसमर्थ है, तो आप भी उससे विपरीत नहीं हो सकते, यदि आप उस ईश्वर की अक्षुण्ण प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करना सीख लें।—*Man's Eternal Quest*

ध्यान के द्वारा मानव के ससीम व्यक्तित्व का महान विस्तार किया जा सकता है।···ज्योंही आपकी चेतना दैवी प्रज्ञा द्वारा विस्तार को प्राप्त होती है, आपका व्यक्तित्व उत्तरोत्तर आकर्षक और शक्तिशाली हो जाता है, तब आप व्यक्तित्व के लगभग किसी भी पक्ष को स्वेच्छा से धारण कर सकते हो। मन समस्त सीमाओं का अतिक्रमण कर सकता है; और ज्यों-ज्यों आप आध्यात्मिक रूप से विकसित होते हैं और आपका आन्तरिक जीवन देह-चेतना से पृथक हो जाता है, उस समय आपकी शरीर से अहंपूरक आसक्ति शिथिल पड़ जाती है और आप एक अवर्णनीय स्वतन्त्रता का अनुभव करते हैं।—*Man's Eternal Quest*

सर्वोपरि, उत्कृष्टतम विधि तो यह है कि आप उस शान्त, श्वास-शून्य, चेतन और शक्तिशाली स्थिति में अधिकाधिक टिके रहें जो एकाग्रचित, लम्बी प्रार्थना, गहरे सकारात्मक चिन्तन, भजन-गान या प्रतिज्ञापन अथवा ध्यान के सर्वोत्कृष्ट साधन अर्थात् योगदा सत्संग की एकाग्रता की प्रविधि से शरीर तथा मन को निश्चल करने, चेतना को प्रणवनाद में मज्जित करने, और क्रियायोग के अभ्यास द्वारा मेरुदण्ड एवं मस्तिष्क का चुम्बमीयकरण करने के पश्चात् प्राप्त होती है।* आत्मा का शरीर से पृथक अस्तित्व-बोध तब आरम्भ होता है जब हृदय और सांस शान्त होते हैं, जब शरीर के भार की गुरुता नष्ट हो जाती है और आप हल्कापन महसूस करते हैं और

* एकाग्रता की प्रविधि एवं ध्यान की ओम्-प्रविधि योगदा सत्संग पाठों में सिखाई जाती है। इन पाठों के दीक्षित साधकों के लिये क्रियायोग की उच्चतम प्रविधि भी उपलब्ध है।

जब समस्त संवेदनाओं का निराकरण हो जाता है और मन निश्चल हो जाता है।—*योगदा सत्संग*

दूसरों के लिये निःस्वार्थ सहानुभूति को विकसित करो

जैसे-जैसे आपके अनुभव की परिधि व्यापक होने लगती है, वैसे-वैसे आपकी चेतना भी व्यापक होनी शुरु हो जाती है। चेतना रबड़ की भाँति बिना टूटे खींची जा सकती है। जितना इसे खींचो उतना ही बढ़ती जायेगी। जब आप अपने विचारों को अपने और अपने इष्ट-बन्धुओं तक ही सीमित रखते हैं, तब आप अपनी चेतना को भी अपने तक ही सीमित करके आध्यात्मिक विकास में व्यवधान डाल रहे होते हैं। पर ज्योंही आप किसी के लिये कुछ करना आरम्भ करते हैं, आप समग्ररूप से मात्र स्वार्थी नहीं रहते। अब आप कूटस्थ चेतना* की ओर अग्रसर हो रहे हैं। जब भी आप सच्चे अर्थों में किसी की सहायता इस भाव के बिना करते हैं कि आप उस व्यक्ति को अपनी स्वार्थसिद्धि के लिये उपकरण रूप में प्रयुक्त करेंगे, आप क्षणिक रूप से कूटस्थ चेतना में पदार्पण करते हैं।—*योगदा सत्संग*

प्रेम की परिधि का विस्तार करना

बाकी सबको प्रेम की परिधि से बाहर निकाल कर केवल एक ही व्यक्ति तक अपने प्रेम को सीमित मत रखो, चाहे वह कितना ही प्रिय क्यों न हो। प्रत्युत जिससे आप सर्वाधिक प्रेम करते हैं, प्रेम के उसी भाव से अपने प्रेमी को सम्मिलित करते हुए, सभी प्राणियों और पदार्थों से भी प्रेम करो। जब आप सर्वत्र विद्यमान प्रेम को एक व्यक्ति के प्रेम में कैद कर देते हो, तो वह प्रेम वहाँ से बच निकलने की कोशिश करेगा और आपसे तब तक आँखमिचौली खेलेगा, जब तक आप इस प्रेम का अनुभव हर आत्मा में नहीं कर लेते। जिस प्रेम को आप एक या कुछ

*सृष्टि में अभिव्यक्त ईश्वर की सर्वशक्तिमान प्रज्ञा और उसके वात्सल्य की आकर्षक शक्ति।

के लिये ही महसूस करते हैं, उसे सभी में बाँटो और उस प्रेम की तीव्रता और आध्यात्मिक गुण को भी बढ़ाने का प्रयास करो। तभी आप जान पाओगे कि दिव्य-प्रेम क्या वस्तु है।—*योगदा सत्संग*

अपनी सार्वभौमिकता की कल्पना करो और उसे अनुभव करो

चेतना और भावना की सार्वभौमिकता का साक्षात् अनुभव करने के लिये साधक को अभ्यास की आवश्यकता है। वह मन ही मन पेड़ पर पत्तों के कम्पन को महसूस करे, और वायु के प्रवाह को अपने शरीर के चारों ओर और अपने फेफड़ों में महसूस करे। उसे चाहिये कि वह ईश्वर की ऑक्सीजनीय स्फूर्ति को अपने रक्त कोषों में महसूस करे। साथ ही, कि उसकी चेतना मन्द समीर के संग हिलोरे ले रही है और लोगों के फेफड़ों में प्रवेश कर रही है तथा जीवन को धारण कर रही है। वह साधक मन ही मन अनुभव करे कि वह पृथ्वी के गिर्द विद्यमान समस्त वायुमण्डल में विद्यमान है। वह सूर्य की किरणों को अपनी मांसपेशियाँ समझे, चाँद को अपने प्रेम के रूप में महसूस करे, मानो कि जिस व्यक्ति अथवा वस्तु पर भी चन्द्रज्योत्स्ना पड़ रही है उसे सौन्दर्य प्रदान कर रही है। वह महसूस करे कि वह बादलों में तैर रहा है, कलियों में खिल रहा है, घास की पत्तियों में कम्पायमान हो रहा है। वह स्वयं को पृथ्वीरूपी मृदु आसन समझे, और जो उस भूमि पर चल रहे हों उन्हें अपनी सेवायें प्रदान करे। अन्ततोगत्वा योगी को यह महसूस करना होगा कि वही सब आत्माओं, हृदयों, और समस्त मनों के मन्दिरों में विद्यमान है।

—*योगदा सत्संग*

सीमा की बेड़ियाँ अन्ततः ईश्वर में विलीन कर दी जाती हैं

आत्मा कामनाओं, प्रलोभनों, कष्टों एवं चिन्ताओं की ज़ंज़ीरों द्वारा शरीर से बंधी है और अपने आपको बन्धनमुक्त करने का प्रयास कर रही है। यदि आप उस ज़ंज़ीर को खींचते रहें जो आपको मर्त्य चेतना के साथ बाँधे हुए है, तो किसी दिन आपके सहयोगार्थ अदृश्य

दैवी हस्त'क्षेप होगा और उस जंज़ीर को तोड़ देगा और आप अपने आपको मुक्त पाओगे।—*आध्यात्मिक दैनन्दिनी*

यदि हम ईश्वर से जुड़े हों तो हमारा बोध निःस्सीम होगा। वह बोध ईश्वरीय उपस्थिति के सागरीय प्रवाह में सर्वत्र व्याप्त होगा। जब परमात्मा का बोध हो जाता है और जब यह भी बोध हो जाता है कि हम परमात्मा हैं, तब न तो कहीं स्थल है न समुद्र, न अवनी है न अन्तरिक्ष—सब कुछ वही ईश्वर है। जब सब पदार्थ मानो पिघल कर परमात्मरूप हो जाते हैं, उस स्थिति का वर्णन वाणी का विषय नहीं। तब हम परमानन्द का अनुभव करते हैं—जिसमें आनन्द, ज्ञान एवं प्रेम की सनातन समग्रता होती है।—*मानव की शाश्वत् खोज*

परमहंस योगानन्द जी के वचनामृत

गुरुदेव बोले—

"जो अपनी भक्ति और गहरे ध्यान की प्रक्रिया से जुड़े हैं उन्हें ईश्वरीय स्पन्दन जरूर मिलेगा। ब्रह्माण्ड ही परमात्मा का शरीर है। इसके भीतर बाहर चारों ओर वह सनातन चैतन्य विराजमान है। अपनी चेतना को फैलाओ और सारे विश्व को अपना ही शरीर मानो। तुम्हारी सारी अज्ञानता नष्ट हो जाएगी जब तुम्हें बन्द आँखों के अँधेरे के पीछे दिव्य ब्रह्माण्डीय प्रकाश की झलक मिलने लगेगी।"

श्री श्री दयामाता जी
का
व्यक्तिगत सन्देश

वर्ष भर में विविध विशेष अवसरों पर, मैं भारत भर से गुरुजी के अनेक भक्तों तथा उनके कार्य के शुभचिन्तकों से सुन्दर कार्ड तथा शुभ-कामनाएं प्राप्त करती हूँ। मैं इस अवसर पर उनकी प्राप्ति स्वीकार करना तथा कहना चाहूँगी कि प्रत्येक मेरे हृदय पर गहरे प्रेम तथा आभार सहित अंकित है। मेरे हृदय के प्रेम तथा ईश्वर एवं गुरु के असीम आशीर्वाद को प्राप्त करें।

—दयामाता

टाईम-लाईफ पुस्तकमाला की नई पुस्तक में

श्री श्री परमहंस योगानन्द जी

परमहंस योगानन्द जी तथा उनके द्वारा संसार के लिये छोड़ी गई आध्यात्मिक परंपरा का टाइम-लाइफ पुस्तकमाला की एक नई पुस्तक, 'पूर्व के रहस्य' में वर्णन किया गया है। दो पृष्ठों के उल्लेख में परमहंस योगानन्द जी को पूर्व के उन अग्रगामी आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शकों में "प्रथम एवं अधिकाँश टिकाऊ रूप से प्रभावशाली" बताया गया है, जिन्होंने पाश्चात्य संस्कृति में एक शान्त किन्तु गहरा परिवर्तन किया। परमहंस जी ने 1925 में उस संस्था का मुखयालय किस प्रकार स्थापित किया जिसका नाम बाद में उन्होंने सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप रखना था, तथा जो बीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में प्रवेश होने तक क्रियाशील रही; इसका वर्णन करते हुए टाईम-लाईफ की यह पुस्तक, भारत की प्राचीन आध्यात्मिक सम्पत्ति को वैज्ञानिक शैली में बोधगम्य बनाने में इस 'वाक्पटु तथा सज्जन सन्त' की उपलब्धि को प्रकट करती है। "योगानन्द जी के समय से लेकर, पूर्व-पश्चिम का एक और मिलन-स्थल आधुनिक भौतिक विज्ञान का क्षेत्र रहा है। योगानन्द जी बीसवीं शताब्दी के वैज्ञानिक विकासों की तुलना, हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों के साथ करना पसन्द करते थे। उदाहरणार्थ, उन्होंने अल्बर्ट आइन्सटीन की 'एकत्रीकृत क्षेत्र सिद्धान्त' (unified field theory) की खोज को, जिससे महान भौतिक विज्ञानी को यह स्पष्ट करने की आशा थी कि विद्युत से लेकर गुरुत्वाकर्षण तक प्रत्येक शक्ति का आधार-भूत कारण एक ही है; इस हिन्दु विश्वास से जोड़ दिया कि विश्व की दृष्टिगोचर भिन्नता के आधार में एक ही सत्य स्थित है।

सफल जीवन-यापन की कुंजियाँ
(Keys to Successful Living)

(श्री श्री परमहंस योगानन्दजी की शिक्षाओं के दैनिक जीवन में प्रयोग सम्बन्धी अक्सर पूछे गये प्रश्नों के उत्तर)

प्रश्न—प्रेतात्मा-संपर्क और उसके द्वारा प्राप्त आध्यात्मिक मार्गदर्शन के विषय में आजकल अत्यधिक चर्चा है। क्या परमहंस योगानन्दजी ने कभी इस विषय पर चर्चा की थी? यदि हाँ, तो इस विषय में उनके क्या विचार थे?

उत्तर—प्रेतात्मा-संपर्क (या "माध्यमता," जैसा कि इसे कभी-कभी कहा जाता है) स्वयं को निश्चेष्ट मानसिक स्थिति में लाकर उन व्यक्तियों से संदेश प्राप्त करना है जो अभौतिक या सूक्ष्म जगत* में निवास करते हैं। परमहंस योगानन्द जी ने इस प्रक्रिया के विषय में अनेक अवसरों पर चर्चा की है। उनके लेखों से निम्नलिखित उद्धरण में उन्होंने उन साधनों से प्राप्त "शिक्षाओं" के स्वरूप तथा उन अभ्यासों में निहित आध्यात्मिक खतरों की—जो अधिकतर आजकल के माध्यमों की चर्चाओं में प्रायः उपेक्षित रह जाते हैं—स्पष्ट किया

* स्थूल भौतिक जगत के पीछे प्रकाश एवं ऊर्जा का सूक्ष्म जगत तथा विचार का कारण-जगत है। मृत्यु होने पर आत्मा स्थूल शरीर के पिंजरे से तो मुक्त हो जाती है लेकिन प्रकाशमय सूक्ष्म शरीर तथा संकल्पना के कारण शरीर से अवगुंठित रहती है। वह सूक्ष्म जगत के अनेक स्पन्दनशील क्षेत्रों में से किसी एक क्षेत्र में उसके आध्यात्मिक क्रमविकास को जारी रखने के लिए आरोहित हो जाती है। वहाँ वह उसके कर्मानुसार पूर्वनिर्धारित समय तक वास करती है, और फिर भौतिक जगत में पुनर्जन्म प्राप्त करती है।—प्रकाशक की टिप्पणी

है। अधिकतर लोग गलती से कल्पना कर लेते हैं कि 'मृतक' मानव जीव, जो सूक्ष्म जगत में जा चुके हैं—महान गुरुओं के सम्पर्क में रहते हैं या स्वयं ज्ञान के गहरे स्रोत हैं। सच्चाई यह है कि अधिकतर सूक्ष्म जगतीय जीव विश्वसनीय संदेशवाहक नहीं होते तथा महान रहस्य में अन्तिम अन्तःप्रज्ञा-प्राप्त भी नहीं होते हैं।

"आत्मा दैवी होती है, परन्तु जब तक मनुष्य आत्मबोध नहीं पा लेता, वह मृत्यु के पश्चात भी अपने सांसारिक जीवन काल में अभिव्यक्त देवत्व से अधिक व्यक्त नहीं कर सकता। केवल वे लोग, जिन्होंने शरीर में ही मुक्ति प्राप्त कर ली है, शरीर त्यागने के पश्चात्, परमात्मा से एकाकार होने, और दूसरों को प्रबोधन दे सकने में समर्थ होते हैं। भगवद्गीता बताती है कि अज्ञानी लोग 'दिवंगत आत्माओं' से सलाह लेने में विश्वास करते हैं। ऐसे लोग ईश्वर अर्थात् सबके दैवी पिता और मित्र से सम्बन्ध खोजने के बदले सूक्ष्म जगतीय जीवों के निर्देशन पर विश्वास करते हैं। उसकी सहायता पाने पर, सूक्ष्म जीवों की सहायता की क्या आवश्यकता?

"ईश्वर के दूत मौन और गुप्त ढंग से मानव की सहायता करते हैं"

"साधारणतया मुक्त आत्माएं सूक्ष्म जगत में निवास नहीं करती, वे उन प्राणियों के लिए आरक्षित हैं जिन्होंने हाल ही में धरती त्यागी है और जिन्हें और बहुतेरे पाठ अभी भी सीखने हैं। सर्वव्यापकता में स्थापित महान गुरु असीमित होते हैं, उनमें से कुछ सूक्ष्म या कारण जगत में उद्धारक के रूप में अवतरित हो सकते हैं। इन मुक्त आत्माओं में वे महान गुरु या आध्यात्मिक शिक्षक होते हैं जो ईश्वर द्वारा मौन और गुप्त रूप से मानवजाति की सहायता के लिये नियुक्त किये जाते हैं। जो सत्यान्वेषी उनकी सहायता की आवश्यकता रखता है उस तक पहुँचने हेतु उन्हें किसी कर्त्ता या 'माध्यम' की आवश्यकता नहीं होती, वे शिष्यों की सीधी सहायता करते हैं। ऐसी सहायता के प्रति उपासक जागरूक है या नहीं, इसका कोई महत्त्व नहीं है, जिस ढंग से उसमें भीतरी और

बाहरी सद्परिवर्तन आते हैं उससे वह समझेगा कि उसे दैवी सहायता प्राप्त हो रही है। वाक्पटु माध्यम द्वारा मानवजाति के शिक्षक होने का ढोंग कर रहे साधारण सूक्ष्म जगत के निवासी से निकले वागमितापूर्ण गुंजायमान वाक्य एक साधक के आध्यात्मिक जीवन का परिवर्तन करने की शक्ति नहीं रखते।

"साधारण व्यावसायिक या अदक्ष माध्यम, जिनमें दैवी अनुभूति नहीं है, वे सूक्ष्म जगत से परे संपर्क करने में असक्षम होते हैं। वे ईश्वरानुभूति सम्पन्न संतों को विभिन्न प्रश्नों पर उनके 'विचार' जानने हेतु आमंत्रित नहीं कर सकते।* महान आत्माएं, जो अनिर्वचनीय, अनन्त से एकाकार हो गये हैं, उदाहरण के लिए, धरती पर प्रेतात्मा माध्यम द्वारा साप्ताहिक भाषण देने हेतु आदेशित नहीं किये जा सकते। भगवद्गीता

* अनेक अवसरों पर परमहंस योगानन्द जी ने अपने शिष्यों को बताया था: मेरे देहत्याग के पश्चात् बहुत से 'माध्यम' दावा करेंगे कि वे मेरे संपर्क में हैं तथा मुझसे विश्व के लिए सन्देश प्राप्त कर रहे हैं। ऐसे सब कथन झूठे होंगे।

"विश्व के लिए मेरा सन्देश मेरे व्याख्यान, कक्षाएं तथा साहित्य के माध्यम से, पहले ही प्रतिपादित हो चुका है। मेरे शरीरत्याग के बाद जो लोग दावा करेंगे कि वे मुझसे नई शिक्षाएं प्राप्त कर रहे हैं, उनके बहकावे में कभी मत आना। जो प्रामाणिक साधक मेरी मदद के लिए प्रार्थना करेगा उसे मैं वह हमेशा खुशी से दूंगा—और खामोशी से।"

परमहंस योगानन्द जी की भविष्यवाणी के अनुसार 1952 से बहुत से भ्रमित 'माध्यम' प्रकट रूप से दावा करते आये हैं कि उन्हें महान गुरु से सन्देश प्राप्त हो रहे हैं। एक सुविख्यात गुरु के नाम का सहारा लेकर ऐसे व्यक्ति उन असन्देही लोगों का ध्यान आकर्षित करते हैं जो नहीं समझते कि इस तरह मन को निश्चेष्ट आत्मविस्मृति की अवस्था में छोड़ देना सभी सिद्ध पुरुषों की शिक्षा के परस्पर विरुद्ध है। सिद्धों की शिक्षा इस बात पर जोर देती है कि एकाग्रता, इच्छा-शक्ति, और चेतना का स्वामित्व आध्यात्मिक प्रगति की मूलभूत आवश्यकतायें हैं। यद्यपि कुछ विख्यापित माध्यमों के दावे हैं, लेकिन कोई भी महान गुरु कभी भी किसी निश्चेष्ट आत्मविस्मृति की अवस्था में लीन मन का आमन्त्रण स्वीकार नहीं करेगा। ऐसा करना एक ऐसी प्रथा को उत्तेजन देना होगा जो घातक है—मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी और आध्यात्मिक दृष्टि से भी।

के अनुसार अंधकारमय मानव मन, मानव मुक्ति हेतु दैवी योजना के स्वरूप के सम्बन्ध में अनेक भ्रान्तियों से भरा होता है।

लोकोत्तर क्षेत्र में अनेक भटकती आत्माएं भ्रमण करती हैं

"सूक्ष्म जगत में (अपने बहुतेरे उच्चतर और निम्नतर स्पंदन स्तरों के साथ) बहुत से अच्छे, सामान्य, और बुरे जीव निवास करते हैं; ठीक उसी प्रकार जैसे पृथ्वी पर मानव-जाति में अच्छाई और बुराई की हर श्रेणी को पाते हैं। ऐसा व्यक्ति, जो 'आत्माओं' से हर किसी प्रकार का संदेश पाने के लिए अविवेकपूर्वक अपने मन को ग्रहणशील रखता है, उसमें यह कहने की क्षमता नहीं होती कि वह सूक्ष्म जगत से किस प्रकार के सम्बन्ध बना पा रहा है तथा हर प्रकार के सूक्ष्म कम्पनों के प्रति संवेदनाशील होने के कारण 'बुरे साहचर्य' में पड़ने का वह खतरा भी उठाता है। वह निम्न सूक्ष्म जगतों की प्रकृति के साथ तल्लीनता प्राप्त कर सकता है और इस प्रकार आन्तरिक प्रकाश और मुक्ति जैसे एकमात्र इच्छित लक्ष्य को पाने के आध्यात्मिक विकास में असफल होता है।

"यदि आप अपने मोटर-वाहन को बिना ताले के, खाली तथा इसमें चाबी भी छोड़ दें तो कोई भी व्यक्ति इसमें सवार होकर इसे चला सकता है और इसे नष्ट कर सकता है। इसी प्रकार जब आप अपने मस्तिष्क को खाली रखते हो तो कोई भी भटकती आत्मा इसमें प्रवेश करके इसपर आधिपत्य कर सकती है। सूक्ष्म जगत में ये आत्माएं करोड़ों की संख्या में भटक रही हैं। वे पुनर्जन्म पाना चाहती हैं, परन्तु बुरे कर्मों के कारण इच्छानुरूप शीघ्रता से पुनर्जन्म पाने में असमर्थ हैं। इस प्रकार वे निरन्तर ऐसे लोगों की खोज में रहती हैं, जिनके मस्तिष्क मूढ़तापूर्वक खाली हों, ताकि वे उस मनुष्य के मन और शरीर को भौतिक शरीर पाने की अपनी इच्छापूर्ति हेतु उपयोग में ला सकें। यदि आप अपने मस्तिष्क को खाली रहने देते हैं तो वे अति शीघ्रता से इसमें प्रविष्ट हो सकती

हैं।* यदि व्यक्ति कमजोर या नकारात्मक है तो किसी बैठक में वह भटकती आत्मा का आसानी से शिकार हो सकता है, जो अवचेतन मस्तिष्क को विक्षिप्त कर देती है।

"ठीक इसके विपरीत जब कोई ईश्वर सान्निध्य हेतु वैज्ञानिक प्रविधियों का अभ्यास करता है, जो भारत ने विकसित की थीं, तो उसका मस्तिष्क खाली नहीं रहता है; फलतः कोई भटकती आत्मा उसमें प्रवेश नहीं कर सकती। ये अभ्यास सूक्ष्म जगत की अवचेतन अवस्था को पार कर जाते हैं तथा मन को ललाट में स्थित कूटस्थ केन्द्र तक पहुँचाते हुए मानव की अधिचेतन अवस्था को विकसित करते हैं, जहाँ कोई भी भटकती आत्मा आने का साहस नहीं कर सकती।† अधिचैतन्य में ही हम संतों और गुरुओं से मिलते हैं। वे महान प्रकाश से घिरे रहते हैं तथा जब

* दो आदमी एक साथ एक कुर्सी पर नहीं बैठ सकते। उसी तरह दो आदमी एक साथ एक दिमाग से नहीं सोच सकते। "माध्यम" वह व्यक्ति है जो अपना चेतन मन रिक्त कर देता है ताकि कोई दूसरा उसे इस्तेमाल कर सके।

—श्री श्री परमहंस योगानन्द

† योग की शिक्षा है कि मानव के मस्तिष्क एवं मेरूदंड में प्राण और चेतना के सात सूक्ष्म चक्र स्थित हैं। अधिकांश लोगों की चेतना मुख्यतः निचले तीन चक्रों में ही रहती है जो साधारण जागृत चेतना तथा अवचेतना के केंद्र हैं, जिनकी ग्रहण-शक्ति भौतिक जगत तथा निम्न स्तर के सूक्ष्म जगत तक ही सीमित होती है। मन को रिक्त तथा निश्चेष्ट कर, जैसा कि प्रेत-सम्पर्क में करते हैं, चेतना को अधिचेतना के उच्चतर केंद्रों की ओर आरोहित करना असम्भव है; गहन-एकाग्रता, भक्ति, एवं आत्मानुशासन द्वारा ही यह सम्भव है। यद्यपि निश्चेष्टता अवचेतन मूर्छा निर्माण कर सकती है जिससे भौतिकता के आगे की कुछ झलकें दीख सकती हैं, परन्तु यह तरीके व्यक्ति को सूक्ष्म जगत के कुछ स्थूल क्षेत्रों से परे नहीं ले जा सकते।

महान योगियों ने यह भी दिखला दिया है कि अवचेतन मन यादों एवं प्रभावों का एक भण्डार है जिसमें व्यक्ति ने जो कुछ भी पढ़ा है, सिनेमा में देखा है, या अन्य किसी भी तरीके से अनुभव किया है—वह सब संचित है। जब कोई अपने मन को निश्चेष्ट करता है, तब जो दीखता है या अनुभव होता है, वह सूक्ष्म जगत की सच्ची अनुभूति है या अवचेतन मन की स्मरणशक्ति, कल्पना, एवं भ्रम से उत्पन्न कोई खेल है, यह कहना अति कठिन है।—प्रकाशक की टिप्पणी

कोई उन्हें देखता है तो निःसन्देह अन्तर्ज्ञान द्वारा जान लेता है कि वे महान आत्माएं हैं।

"किसी को भी भौतिक रूप से देहमुक्त आत्माओं के जगत में प्रवेश करने की कोशिश तब तक नहीं करनी चाहिए जब तक कि वह उस जगत को नियंत्रित करने की आध्यात्मिक शक्ति से सम्पन्न न हो जाए। ऐसी शक्ति परमपिता के साथ सम्बन्ध प्राप्त करने से ही मिलती है। वह सभी आत्माओं का रचयिता है तथा जब आप उसके साथ समस्वर हो जाते हैं, तब यदि आप किसी को देखना और उससे बात करना चाहते हैं, जो शरीर त्याग चुका है, तो परमपिता उस आदमी को आपके पास भेज देंगे। जैसा कि जीसस ने कहा था: 'पहले ईश्वर के राज्य की तथा उसकी धर्मपरायणता की खोज करो।"

दिव्य दृष्टि एकाग्रता से आती है, निष्क्रियता से नहीं

"योगी जन अन्य सारे विचारों को हटाते हुए ईश्वर के किसी सुनिश्चित विचार पर एकाग्र होने के महत्त्व पर ज़ोर देते हैं। इस प्रकार हमेशा उच्चतम स्पन्दन तक पहुँचने की चेष्टा में साधक निम्न सूक्ष्म जगत को उपेक्षित कर देता है तथा परमपिता के किसी एक प्रतिरूप: जैसे कि शान्ति, ब्रह्माण्डीय स्वर ओम् या प्रकाश, या यदि कोई अति विकसित हो तो संत के प्रत्यक्ष स्वरूप से वार्तालाप कर सकता है।

"जो साधक ध्यान में गहरे जाते हैं वे उच्चतर क्षेत्रों तक, जहाँ महान आत्माएं रहती हैं, पहुँचने में समर्थ होते हैं। यही उद्देश्य है— आत्म-साक्षात्कार की वैज्ञानिक प्रविधियों का, जो पुरातन काल से भारत में सिखाई जाती है। सचेत रूप से, ईश्वर और गुरुओं की सूक्ष्म स्पन्दित सहायता को पाने के लिए ये अभ्यास योगी को अपनी चेतना उन्नत करने में सहायता देते हैं। ये प्रविधियाँ सुरक्षापूर्वक साधक को हर प्राणी के पीछे चैतन्य की उपस्थिति अनुभव कराने की ओर ले जाती हैं।

"क्रियायोग* का सुरक्षित मार्ग अपने अभ्यासकर्ताओं को उन्नत बनाता है। इसके उन्नत शिष्यों जैसे, लाहिड़ी महाशय, श्रीयुक्तेश्वर तथा कई दूसरों के जीवन इसका पर्याप्त प्रमाण देते हैं। दक्ष क्रियायोगी अपनी चेतना और इच्छाशक्ति का अधिपति हो जाता है। जो लोग सूक्ष्म जगतीय प्राणियों को अभ्यागमन हेतु 'आमंत्रित' करते हैं...वे असावधानीपूर्वक अपने ईश्वर-प्रदत्त मुक्ति के साधनों : चेतना और इच्छा-शक्ति की दासता का खतरा उठाते हैं। यद्यपि आप सिर्फ 'परोपकारी' सूक्ष्म जगतीय प्राणियों का ही सामना करें, पर सच्चाई यह है कि आपने दूसरे प्राणियों को अपनी चेतना को नियंत्रित करने की अनुमति दी। यह एक खतरनाक अभ्यास है, जो किसी भी प्रकार से आध्यात्मिक प्रगति को त्वरित नहीं करता है, या मनुष्य के एकमात्र उद्देश्य ईश्वरीय उपस्थिति के सच्चे अनुभव से भी मेल नहीं खाता है। —(श्री श्री परमहंस योगानन्द) []

* एक पवित्र आध्यात्मिक विज्ञान जिसका आविष्कार भारत में हजारों साल पहले हुआ था। इसमें एकाग्रता एवं ध्यान की अत्यन्त सक्षम प्रविधियाँ सम्मिलित हैं जिनके अभ्यास से चेतना अंतर्मुख हो जाती है तथा अंतःवासी आत्मा की अनुभूति प्राप्त करती है। श्री श्री परमहँस योगानन्दजी द्वारा लिखित "योगी कथामृत" में इसका वर्णन है तथा योगदा पाठमाला के योग्य विद्यार्थियों को यह सिखाई जाती है।—प्रकाशक की टिप्पणी

परमहँस योगानन्द जी का पत्र

एक व्यक्ति को लिखे हुए पत्र के अंश, जिसने "प्रेतात्मा-सम्पर्क" के माध्यम से आध्यात्मिक गुरुओं से सम्पर्क स्थापित करने के विषय में मार्गदर्शन माँगा था।

प्रिय______:

आप और आपके साथियों के एक मृत सिद्ध पुरुष के साथ संपर्क का आपका वर्णन मुझे बहुत दिलचस्प लगा। मुझे स्वतः इस विषय में व्यापक अनुभव है और आपकी वर्णन की हुई परिस्थिति भली प्रकार समझता हूँ।

परन्तु मेरी जन्म-जन्मांतर की खोज मुझे अनन्त के तीव्रतम अनुभवों की गहराई में लाई है। ईश्वर में मैं सभी आध्यात्मिक अनुभवों का सापेक्ष मूल्य देख सकता हूँ और कोई भी भक्त किसी अनुभव में कितनी दूर जा सकता है यह अन्तर्ज्ञान से जान सकता हूँ। यह मेरी शक्ति से नहीं होता अपितु ईश्वर मुझे यह सब दिखलाते हैं। मैं जो देखता हूँ उसे शायद ही कभी बयान करता हूँ, जब तक कि भक्त के आध्यात्मिक कल्याण के लिए वह आवश्यक न हो। इसलिए, अब अगर मैं आपको सावधान करता हूँ तो वह आपकी सहायता के लिए है।

किसी भी आत्मा से संपर्क करने के बजाय परमात्मा से संपर्क करना अच्छा है क्योंकि अन्त में आप पायेंगे कि भविष्यवाणियाँ काम नहीं आती बल्कि संभ्रमित कर देती हैं। गहरे ध्यान में ईश्वर-संपर्क का अनुभव प्राप्त कर अपने निजी मामलों में अपने निर्णय स्वतः करो। कभी-कभी आत्माओं का परामर्श बड़ा संभ्रमित करने वाला तथा द्विअर्थात्मक होता है : अगर आप उसका अंतर्निहित अर्थ नहीं समझ सकें तो आप भ्रमित होंगे। परन्तु अगर आप ईश्वर से प्रार्थना करने के पश्चात् कार्य करेंगे तो आप अच्छे निर्णय के बाद गलत भी कर दें तो ईश्वर उसे सुधार देंगे।

किसी भी आत्मा से ज्यादा अच्छी तरह ईश्वर जानते हैं कि आपके लिए बेहतर क्या है। आप जब उच्चतम को प्राप्त कर सकते हैं तो किसी न्यून को स्वीकार क्यों करें ? आपको चाहिए कि आपकी गहनतम प्रार्थनाओं के माध्यम से कार्यान्वित ईश्वर को स्वीकार करें। दूसरों के संभ्रमित करने वाले संदिग्ध मार्गदर्शन के विपरीत वह अचूक मार्गदर्शन होगा। आपकी अंतःप्रेरणा को विकसित कर ईश्वर आपकी सहायता करते हैं।

इसके बाद आपसे पत्र पाकर खुशी होगी तथा आप मेरे लिए जो मार्ग खुला करेंगे उस मार्ग से आपकी सहायता करूँगा। आपके लिए मैं गहरी प्रार्थना कर रहा हूँ। ईश्वर आपका कल्याण करें।

आपका,
हस्ताक्षर
(परमहंस योगानन्द)

"प्रेतात्मा-संपर्क"—खतरों को पहचानना

सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप के संन्यासियों के लिए श्री श्री दयामाता जी द्वारा दिये गये व्याख्यान के अंश

बहुत साल पहले, एक आदमी जो सेल्फ-रीयलाइज़ेशन का अभ्यास करता था, आश्रम में आया। उसने अपने प्रेतात्मासंपर्क तथा अवचेतन अनुभवों का वर्णन किया—किस तरह वह अपने मन को अति निष्क्रिय बनाता था और फिर विगत आत्माओं को आमंत्रित करता था। उसने मुझे बताया आंतरिक जगत से उसे कैसे-कैसे अद्भुत प्रकटन एवं मार्ग-दर्शन प्राप्त हो रहे हैं; परन्तु मैंने उससे कहा, "तुम्हें तत्क्षण इसे बन्द करना चाहिए। इससे बिल्कुल संबन्ध मत रखो।" ऐसे अभ्यासों के खतरे जानते हुए मैंने उससे बार-बार विनती की परन्तु वह माना नहीं। "मुझे इन संबन्धों से बहुत मदद मिल रही है"—उसने उत्तर दिया।

कुछ वर्ष उपरान्त वह लौटा और उसने मुझे बताया, "मैं नहीं जानता क्या हुआ। एकाएक अद्भुत मार्गदर्शन मिलने के बजाय मुझे रात-दिन सताया जा रहा है। मुझे आवाज़ें सुनाई देती हैं। वे मेरी विचार-प्रक्रिया को विकृत कर रही हैं तथा मेरे मन में हर तरह के भयंकर विचार उत्पन्न कर रही हैं। अब मुझे अपने आप पर कोई नियंत्रण नहीं रहा।" ये आवाज़ें उसका दिन-रात पीछा करती थीं; वह न खा सकता था न सो सकता था। अन्ततः वह इसे सहन नहीं कर सका और उसने आत्म-हत्या कर ली। सान डिगो में एक पुल पर से वह नीचे सड़क पर कूद पड़ा।

आप जानते हैं लोग ऐसे प्राणियों से क्यों संपर्क स्थापित करते हैं? प्रायः इसलिए कि मान्यता प्राप्त करने की सूक्ष्म इच्छा से वे प्रभावित होते हैं, चाहे वे इस बारे में सचेत हों या न हों। उनके उद्देश्य अच्छे हो सकते हैं, वे लोगों की सहायता करना चाहते हों; परन्तु एक सिद्ध गुरु

द्वारा सिखाई गई अनुशासन प्रणाली का पालन करते हुए अपने आपको और अधिक आध्यात्मिक बनाने की सच्ची चेष्टा करने के बजाय एक "प्रेत-शिक्षक" का निष्क्रिय माध्यम बनना अधिक सुलभ समझते हैं। वे यह नहीं समझ पाते कि जब तक कोई आध्यात्मिक रूप से पूर्ण विकसित न हो, जैसे कि गुरुजी थे, वे केवल भटकती आत्माओं से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं—सूक्ष्म-लोक के ऐसे प्राणी जो अपने अपरिपूरित भौतिक अनुभवों की इच्छाओं की पूर्ति के लिए एक शरीर की तलाश में हैं। ऐसी आत्माओं को कुछ दार्शनिक ज्ञान हो सकता है; और प्रायः वे प्रबुद्ध आत्मा का ढोंग करती हैं—जैसे कि कई वर्ष या शताब्दियाँ पहले का कोई भारतीय संत हो या मिश्र का पीर। और माध्यम से यह कहते हैं कि वे एक अद्‌भुत आध्यात्मिक शिक्षा लेकर आये हैं। ऐसे छल से वे माध्यम को तत्पर प्रवेश देने के लिए मनाती हैं। परन्तु उनका मुख्य लक्ष्य होता है, "मुझे शरीर चाहिए।" इस व्यक्ति की करुणात्मक गाथा ऐसे कइयों में से एक है जिनके बारे में मैं व्यक्तिगत रूप से जानती हूँ, जिसमें व्यक्ति विगत आत्माओं से सम्पर्क करने के फलस्वरूप अत्यधिक मानसिक तथा भावनात्मक क्षति का शिकार हुआ है। इनमें से अधिकाँश अच्छे उद्देश्यों से प्रारम्भ करते हैं परन्तु अन्ततः "भटकती आत्माएं", जिनको वे निष्क्रिय रूप से अपनी इच्छाशक्ति तथा चेतना को समर्पित करते हैं, उनपर सम्पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर लेती हैं। कोई भी, जो मन को निष्क्रिय करने का अभ्यास करता रहता है, आज या कल भूताविष्ट होने के खतरे से घिरा रहता है। जैसे कि गुरुजी ने कहा, पहले भगवान को खोजिये, फिर आप निःसन्देह रूप से यह जान लेंगे कि आप उस दैवी शक्ति से सीधा सम्पर्क कर रहे हैं न कि किसी निम्नस्तर सूक्ष्म शक्ति से।

"विज्ञान सत्य को केवल बाहर से ही देखता है। तत्व-मीमांसक सत्य पर भीतर से बाहर की ओर दृष्टिपात करता है। तभी तो वे परस्पर विरोधी हैं। परन्तु तत्वद्रष्टा व्यक्ति जो विज्ञान तथा तत्वमीमांसा दोनों के मर्म को समझते हैं, इन दोनों में भेद नहीं पाते। वे विज्ञान तथा सत्य के सादृश्य को देख पाते हैं क्योंकि वे पूरे चित्र को देखते हैं।"

—श्री श्री परमहंस योगानन्द

योग एवं आधुनिक विज्ञान
(Yoga and Modern Science)

क्या आपका चिकित्सक आपके लिए प्रार्थना करता है?

अपने स्टेथॉस्कोप तथा सफेद कोट के आवरण के भीतर बहुत से चिकित्सक विश्वास की संभावनाओं पर आस्था रखते हैं। हाल ही में एम० डी० पत्रिका की पूछताछ से स्पष्ट हुआ कि उनके प्रश्नों का उत्तर देने वाले 136 चिकित्सकों में से दो तिहाई ने बतलाया कि उन्होंने रोगी के लिए प्रार्थना की थी।

ओहियो के एक चिकित्सा व्यवसायी तथा प्रसूति विशेषज्ञ ने बतलाया कि जब कभी कोई स्त्री प्रसव-वेदना में होती है तब मैं उसके लिए तथा उसके बच्चे के लिए प्रार्थना करता हूँ। परन्तु क्या चिकित्सकों का ऐसा मत है कि प्रार्थना वास्तव में प्रभावशाली होती है? इस सम्बन्ध में नेब्रास्का के एक चिकित्सक ने बतलाया "मैंने ऐसे लोगों को रोग-मुक्त होते देखा है जो प्रार्थना के परिणामस्वरूप ही हो सकता था"—जैसे कि उनका अपना साला।

एम० डी० का जनमत सान फ्रांसिस्को के अनुसंधानों से प्रेरित हुआ था जिससे संकेत मिला था कि प्रार्थना सभाओं से हृदय रोगियों को विशेष लाभ हुआ—भले ही उन्हें पता भी नहीं था कि लोग उनके लिए प्रार्थना कर रहे हैं।

अवांछित विचारों से मुक्ति

आप एक अवांछित विचार से कैसे मुक्त हो सकते हैं? डेनियल एम० वैगनर नामक मनोवैज्ञानिक ने ऐसा पाया कि सामान्य नीति, अमुक वस्तु के विषय में न सोचने का भरसक प्रयास, का विपरीत प्रभाव भी हो सकता है। जितना अधिक हम अवांछित विचारों को दबाने का प्रयास करते हैं उतनी ही उनमें अधिक तल्लीन होने की सम्भावना है।

वैगनर और उसके सहयोगियों ने महाविद्यालय के एक छात्र समूह से कहा कि वे सफेद भालुओं के बारे में न सोचें और अपने चालू विचारों को एक टेप रिकार्डर में भरते जायें और प्रत्येक बार जब मन में सफेद भालू का विचार आए तो घण्टी बजाएं।

सफेद भालूओं के बारे में न सोचना विद्यार्थियों के लिए नितान्त कठिन हो गया। पाँच मिनट के सत्र में उन्हें भालू का हर मिनट एक से अधिक बार उल्लेख करना पड़ा या घण्टी बजानी पड़ी। दूसरे शब्दों में जब हम सचेष्ट किसी विचार का दमन करते हैं तो विरोधाभासक रूप से उतना ही अधिक हम उसके बारे में सोचते हैं।

अवांछित विचारों से छुटकारा पाना इतना कठिन क्यों है? शोधकर्ताओं का मत है कि अगर हम चाहें कि हम सफेद भालू के बारे में न सोचें तो हमें पहले उसके बारे में सोचना ही होगा।

तो परेशान रहने वाला व्यक्ति क्या करे? शोधकर्ताओं ने प्रयोग को फिर दोहराया। पर इस बार एक अन्य विद्यार्थी-वर्ग से कहा कि यदि उन्हें सफेद भालू का विचार आए तो तत्क्षण वे लाल कार का विचार करें। इस एकाकी विक्षेपक विचार को प्रयोग करने से काम बन गया।

इससे विद्यार्थियों को उस सफेद भालू के भयंकर विचार से मुक्त होने में सहयोग मिला।*

शोधकर्ताओं का सुझाव है कि सम्भवतः इस युक्ति से मनुष्य वैचारिक सनक से मुक्त हो पाये, साथ ही दुर्व्यसनों तथा धूम्रपान इत्यादि से भी छुटकारा पाने में सक्षम हो पाये।

प्रिय दैनन्दिनी : तुम मेरे प्रतिरक्षक-तन्त्र की सहायक हो

आपके मेज़ की दराज में एक सशक्त शक्तिवर्धक है : कलम और कागज। अपने दमित विचारों को रोजनामचे के रूप में अथवा किसी परममित्र को पत्र के रूप में लिखने से आपको स्वस्थ रहने में सहायता मिल सकती है। ये निष्कर्ष दक्षिणी मैथोडिस्ट विश्वविद्यालय में शोधरत जेम्ज़ पैनवेकर नामक मनोवैज्ञानिक की अनुसंधान शृङ्खला के हैं।

अपने दानवों से अकेले जूझने की अपेक्षा जो मनुष्य अपने अभिघातज अनुभवों को स्वीकार कर लेते हैं—चाहे वे एक डायरी में ही क्यों न हों—ऐसे मनुष्य श्रेष्ठत्तर प्रतिरक्षक क्रिया रखते हैं। ऐसा पैनवेकर का मत है। और ऐसे व्यक्तियों को कभीकभार ही डाक्टर के पास जाना पड़ता है और वे कुल मिलाकर अच्छा स्वस्थ जीवन जीते हैं। यह उन्होंने वाशिंगटन डी० सी० में अमरीकन मनोवैज्ञानिक संघ की वार्षिक सभा में बताया।

पचास युवकों के पँचदिवसीय मनः परीक्षण काल में पैन-वेकर तथा उसके सहयोगी मनोवैज्ञानिक जैनिस काईकोल्ट ग्लेज़र ने आधे युवकों से कहा कि वे अपने जीवन की क्षोभकारी घटनाओं को लिख डालें तथा यह

*श्री श्री परमहंस योगानन्द जी के शब्दों में : "कोई भी आदत मन के केन्द्रित होने के परिणामस्वरूप निर्मित होती है। आप किसी विशेष ढंग से सोचते रहे हैं। किसी नूतन तथा अच्छी आदत को डालने के लिए केवल विपरीत दिशा में मन को केन्द्रित करो।" अपने योगदा सत्संग पाठों में उन्होंने वैज्ञानिक ढंग से विक्षेप के कारणों के निवारण हेतु तथा मन को एक ही विचार विशेष पर केन्द्रित करने के लिए योग-ध्यान की प्रविधियाँ बताई हैं।

भी लिखें कि उन घटनाओं के विषय में उनकी क्या प्रतिक्रिया है। बाकी युवकों ने भी रोजनामचा लिखा पर उन्होंने सतही विषय चुने।

परिणाम : जिन लोगों ने कागज़ पर सब कुछ लिख डाला उनकी प्रतिरक्षक शक्ति अत्यधिक बढ़ गई और रक्तपरीक्षण से यह प्रमाणित हो गया। पर जिन्होंने तुच्छ लक्ष्यों को संक्षेप से लिखा उनको ऐसा कोई लाभ नहीं हुआ। दैनन्दिनी लिखने का काम छोड़ने के छः सप्ताह बाद भी परिणाम यथावत बने रहे। आभ्यान्तरिक विक्षेपों को व्यक्त करने वाले व्यक्तियों को डाक्टर के पास जाने की बहुत कम आवश्यकता पड़ी।

किन्तु लेखन इलाज केवल कागज़ पर आवेगों को उगल डालने तक ही सीमित नहीं है। पैनवेकर ने सैंड्राबाल नामक एक शोधछात्रा के साथ अनुसन्धान में ऐसा पाया कि जिन लोगों ने अभिघातज समस्या तथ्यों को लिखने के साथ-साथ अपनी प्रतिक्रियाओं को भी साथ-साथ लिख दिया वे छः मास के बाद अधिक स्वस्थ पाये गए।

—अमरीकन हैल्थ, जनवरी 1987

सकारात्मक मनोवृत्ति के साथ कार्य करना

सामान्य धारणा के विपरीत यह सिद्ध करने के लिए कि प्रसन्नचित्त कार्यकर्ता अधिक उत्पादन करते हैं, कोई वैज्ञानिक साक्ष्य नहीं मिला था —अब तक। किन्तु मेरीलैंड विश्वविद्यालय के नए अनुसंधान से संकेत मिलता है कि प्रसन्नचित्त कार्यकर्ता, कम प्रसन्नचित्त कार्यकर्ताओं की तुलना में निर्णय तथा समस्याओं का समाधान करने में अधिक सफल होते हैं।

एलिस एम० आइसन नामक मनोवैज्ञानिक तथा उसके सहयोगियों ने कुछ प्रयोग किए ताकि वे चिन्तनशील क्रियाओं पर भावनाओं के प्रभाव को आँक सकें। उनकी गवेषणाओं का सारांश : प्रसन्नचित्त व्यक्ति समस्याओं को रचनात्मक ढंग से सुलझाने में अधिक दक्ष पाये गए, वे अविलम्ब निर्णय ले पाये तथा उन निर्णयों पर परिस्थितिवश आलोचनात्मक पुनर्विचार में भी वे अधिक प्रतिसंवेदी पाए गए।

निर्णय लेते समय अधिक प्रसन्नचित्त व्यक्ति निरर्थक तत्त्वों को निष्कासित करने में जल्दी ही सफल हो गए जब कि विपरीत मनोदशा वाले व्यक्तियों को अनावश्यक तत्त्वों को निकालने में बहुत समय लगा।

प्रबन्धक ध्यान दे : आईसन के अनुसार, "सामान्य रूप से प्रसन्नचित्त कार्यकर्ता अधिक सहायक, अधिक सहयोगशील तथा अपने समय के साथ उदार होते हैं। और यह बात व्यापार के परिप्रेक्ष्य में अधिक महत्व-शील है क्योंकि वहाँ दूसरों के साथ मिलकर बेहतर काम करने पर बल दिया जाता है।"—*Working Smart*—नवम्बर 1985

परमहंस योगानन्द जी के वचनामृत

एक जिज्ञासु ने पूछा—

"भावनाओं को काबू में रखने की आपकी सीख क्या खतरनाक नहीं है? बहुत से वैज्ञानिकों का दावा है कि निरोध से मानसिक असन्तुलन, यहां तक कि शारीरिक रोग भी, पैदा हो सकते।"

गुरुदेव ने जवाब दिया—

"निरोध हानिकारक है—यह विचार कि तुम्हें किसी चीज की जरूरत है, किन्तु उसे पाने के लिए नेक कोशिश नहीं करें। आत्म-संयम कल्याणप्रद है—धैर्यपूर्वक अनुचित विचार की जगह उचित विचार लाना, गन्दे काम के बदले उपयोगी काम करना। जो बुरा सोचते रहते हैं, वे अपने को ही कष्ट देते हैं। जो अपने मन को विवेक से और अपने जीवन को रचनात्मक कार्यों से भरपूर रखते हैं, वे भयंकर कष्ट से बच जाते हैं।"

श्री श्री दयामाता जी का पत्र भक्तों के नाम

(Letter to the Devotees)

जनवरी-फरवरी 1990

प्रिय आत्मन्,

अपने जीवन का पुनःमूल्यांकन करने तथा ईश्वर ने जो कुछ भी हमें प्रदान किया है उसकी नये सिरे से सराहना करने के लिए, नववर्ष एक आदर्श समय है। मैं उसे उन सुन्दर आत्माओं के लिये, जो गुरुदेव परमहंस योगानन्दजी के संदेश की ओर आकर्षित हुई हैं, धन्यवाद करती हूँ। यद्यपि बाहरी स्तर पर दूरियाँ हमें पृथक करती हैं, परन्तु भीतरी स्तर पर हम एक ऐसी मित्रता रखते हैं जो आध्यात्मिक रूप से हम सबके लिए सहायक है। दिव्य मैत्री भौतिक जगत की आभासी बाधाओं को पार कर जाती है; और उस चेतना में हम प्रतिदिन गहनतापूर्ण प्रार्थना में आपके साथ उस प्रेम का आदान-प्रदान करते हैं, जिसे हम आप सबसे प्रवाहित होता अनुभव करते हैं।

हमारे जीवन को नया रूप देने तथा हमें ईश्वर की ओर और अधिक सजग करने के लिए प्रार्थना में आश्चर्यजनक शक्ति है। गुरुजी ने कहा है, "यदि निष्कपटता तथा अप्रतिबंध भक्ति के माध्यम से आपकी प्रार्थनाएँ ईश्वर तक पहुँच जायें तो आपके पाप महासागर से अधिक गहरे तथा हिमालय से भी अधिक ऊँचे क्यों न हों, इसका कोई महत्व नहीं रहता। वह उन कार्मिक विघ्नों को नष्ट कर देगा।" जब हम

ईश्वर से गम्भीरतापूर्वक तथा प्रेम से अनुरोध करते हैं तो वे अपनी सहायता से उत्तर देते हैं। वे उन विघ्नों को जो हमारी उन्नति में बाधक प्रतीत होते हैं, हटा सकते हैं, अथवा वे हमें हमारे पथ पर एक नया परिदृश्य तथा हमारे लक्ष्य का अधिक सुस्पष्ट दृश्य प्रदान कर सकते हैं। अन्तर्ज्ञान की सूक्ष्मदृष्टि से हमारे पथ पर भयंकर चट्टानों को प्रायः उन्नति के रूप में देखा जा सकता है।

अपने सभी प्रयासों में प्रार्थना की सक्रिय शक्ति का प्रयोग करने से, आपकी सर्वोत्तम वर्ष उत्पन्न करने की चेष्टाएं गतिमान होंगी। ईश्वर-निर्दिष्ट विचार एक आध्यात्मिक शक्ति उत्पन्न करता है जो सफलता को आकर्षित करती है। अतः वर्ष को अपने जीवन के पुनःनिरीक्षण से आरम्भ करें। कुछ विशेष दृढ़ संकल्प लें। जिन गुणों को आप व्यक्त करने के इच्छुक हैं, और जिन लक्ष्यों को आप अपनी तथा जिस जगत में आप रह रहे हैं उसकी उन्नति के लिए प्राप्त करना चाहते हैं, उनके लिए प्रतिदिन ईश्वरीय सहायता के लिए प्रार्थना करें।

सर्वोपरि, ईश्वर से याचना करें कि वे स्वयं आपको प्राप्त हो जायें, क्योंकि वे उच्चतम पूंजी हैं। गुरुजी के शब्दों में, "उनसे विनय करें कि वे आपको दर्शन दें। जब तक वे उत्तर न दें विश्राम न करें। बारम्बार अपने पूर्ण हृदय से पुकारें, 'दर्शन दो! दर्शन दो! चाहे तारांगण छिन्न-भिन्न हो जायें, पृथ्वी विघटित हो जायें तो भी मेरी आत्मा आपके लिये चिल्लायेगी, दर्शन दो।' उनके मौन का जड़त्व आपकी प्रार्थनाओं के सतत् दृढ़ आघातों से भंग हो जायेगा।" जब ईश्वर उत्तर देंगे, आपका जीवन उनके प्रेम से आवेष्टित तथा उनके निरंतर आनन्द से व्याप्त हो जायेगा।

दिव्य प्रेम तथा आशीर्वाद,

Daya Mata

श्री श्री दयामाता

YSS/SRF DIRECTORY OF MATHS, ASHRAMAS AND MEDITATION CENTERS

YSS **SRF**

Sri Sri Daya Mata, *Sanghamata and President*

YOGODA SATSANGA SOCIETY OF INDIA (YSS)

Founded in India by Sri Sri Paramahansa Yogananda in 1917

SELF-REALIZATION FELLOWSHIP (SRF)

Founded in America by Sri Sri Paramahansa Yogananda in 1920

YOGODA SATSANGA SOCIETY OF INDIA

For information about Yogoda Satsanga Society activities, write to the General Secretary, Yogoda Satsanga Society of India, Yogoda Satsanga Sakha Math, Paramahansa Yogananda Path, Ranchi-834 001, Bihar, India.

Headquarters and Ashrama Centers

CALCUTTA (Dakshineswar), West Bengal: *Registered Office,* Yogoda Satsanga Society of India, Yogoda Satsanga Math, 21, U.N. Mukherjee Road, Dakshineswar, Calcutta-700 076. West Bengal. Telephones (033) 531931 and (033) 532208. Yogoda Satsanga Ashrama, Yogoda Satsanga Press, and Publication Section.

RANCHI, Bihar: Yogoda Satsanga Society of India, Yogoda Satsanga Sakha Math, Paramahansa Yogananda Path, Ranchi-834 001, Bihar. Telephone (0651) 304836. Yogoda Satsanga Sakha Ashrama and correspondence office.

DWARAHAT, Uttar Pradesh: Ashrama and Retreat. Yogoda Satsanga Sakha Ashrama, P.O. Dwarahat-263 653, District Almora, U.P.

Sakha Kendras and Dhyana Kendras

Andhra Pradesh: Hyderabad.
Bihar: Patna.
Gujarat: Ahmedabad, Bhavnagar, Rajkot, Surat.
Himachal Pradesh: Simla.
Jammu and Kashmir: Jammu.
Maharashtra: Bombay, Nagpur, Pune.
Karnataka: Bangalore, Mangalore.
Kerala: Trivandrum.
Orissa: Puri (Swami Sri Yukteswar Samadhi Mandir).
Punjab: Patiala.
Rajasthan: Jaipur.
Tamil Nadu: Madras.
Union Territories: Chandigarh, New Delhi.
Uttar Pradesh: Lucknow, Suraikhet.
West Bengal: Anandapur (Kulabahal), Bherir Bazar, Calcutta, Ghatal, Handol, Ismalichak, Kalidan, Lakhanpur, Palpara, Rangamati, Srirampore (Swami Sri Yukteswar Smriti Mandir and Sakha Kendra), Sinthibinda.

Kadamtala and Srirampore (Gurudham Centers—Yogoda Satsanga affiliates).

Schools and Charitable Dispensaries

ANDHRA PRADESH

Cuddapah: Homœopathic dispensary.

BIHAR

Ranchi: Yogoda Satsanga Mahavidyalaya (college), Yogoda Satsanga Homœopathic Mahavidyalaya; Yogoda Satsanga Vidyalaya (boys' school), Yogoda Satsanga Vidyalaya Kanya Sakha (girls' school including Balkrishnalaya section for very young children run on Montessori pattern); Yogoda Satsanga Sangeet Kala Bharati (music school), and Yogoda Satsanga Shilpa Kala Bharati (fine arts and crafts school); Yogoda Satsanga Sevashrama Hospital (allopathic and homœopathic sections), eye clinic.

MAHARASHTRA

Bombay: Paramahansa Yogananda Sevashrama Clinic.

Pune: Homœopathic dispensary.

UNION TERRITORIES

Chandigarh: Homœopathic dispensary, Paramahansa Yogananda Primary School.

New Delhi: Homœopathic dispensary.

UTTAR PRADESH

Dwarahat: Yogoda Satsanga Primary School.

Suraikhet: Yogoda Satsanga Intermediate College, High School, and Primary School.

WEST BENGAL

Anandapur, Kulabahal: Kulabahal Paramahansa Yogananda Vidyapith (High School), Yogoda Satsanga Junior Basic School.

Bherir Bazar: Yogoda Satsanga Vidyalaya and homœopathic dispensary.

Dakshineswar: Homœopathic dispensary.

Ghatal: Yogoda Satsanga SriYukteswar Vidyapith (boys' school), Yogoda Satsanga Sri Yukteswar Kanya Vidyapith (girls' school), homœopathic dispensary.

Ismalichak: Yogoda Satsanga Brahmacharya Vidyalaya (boys' school), and homœopathic dispensary.

Kalidan: Sri Yukteswar Smriti Mandir and Library, Primary School.

Lakhanpur: Yogoda Satsanga Kanya Vidyalaya (girls' school), Yogoda Satsanga Kshirodamoyee Vidyapith (boys' school).

Nimpura, Kharagpur: Homœopathic dispensary with branch serving leprosy colony.

Palpara: Yogoda Satsanga Mahavidyalaya, Yogoda Satsanga Vidyalaya (boys' school), Yogoda Satsanga Balika Vidyalaya (girls' school), Yogoda Satsanga Junior Basic School, Yogoda Satsanga Primary School, medical dispensary.

Payarachak: Sri Yukteswar Kanya Vidyapith (girls' school).

Srirampore: Homœopathic dispensary.

Telary: Homœopathic dispensary.

SELF-REALIZATION FELLOWSHIP (YOGODA SATSANGA SOCIETY OF INDIA)

For information about Self-Realization Fellowship activities write to Self-Realization Fellowship, 3880 San Rafael Avenue, Los Angeles, California 90065, U.S.A.

LOS ANGELES, California, U.S.A.: The Mother Center, 3880 San Rafael Avenue (Zip code 90065). Telephone (213) 225-2471. Visiting hours: 9:00 a.m. to 5:00 p.m. Tuesday through Saturday, and 1:00 p.m. to 5:00 p.m. on Sunday. Closed on Monday. All are welcome.

Self-Realization Fellowship Ashrama Centers and Temples

Services are held Thursday at 8 p.m. in all temples; and Sunday at 11 a.m. in all temples except Phoenix (10 a.m.). The Sunday lecture is also given at 9 a.m. in the Pacific Palisades temple, and at 9:30 a.m. in the Hollywood, Encinitas, and San Diego temples. *(Please refer to the "Calendar of Temple Services," available from the SRF international headquarters or any of the temples listed below, for a complete schedule of lectures, meditation services, and other activities.)*

ENCINITAS, California: Ashrama, Retreat, and Hermitage, 215 K Street at Second. P.O. Box 230 758, (Zip code 92023-0758). Telephone (619) 753-2888. Retreat grounds open to the public, 9 a.m. to 5 p.m. daily except Monday.

Temple: 939 Second Street. Telephone (619) 753-1811.

Self-Realization Fellowship Retreat: Guest accommodations. For information write c/o P.O. Box 230 758, (Zip code 92023-0758), or telephone (619) 753-1811.

ESCONDIDO, California: SRF Hidden Valley Ashrama Center and Retreat, 16455 Old Guejito Grade Road (Zip code 92027.) Tel. (619) 749-3399. Guest accommodations for men.

Self-Realization Fellowship Centers and Meditation Groups

For information about meetings, write to Self-Realization Fellowship.

UNITED STATES:

Alabama, Alaska, Arizona, California, Colorado, Connecticut, District of Columbia, Florida, Georgia, Hawaii, Illinois, Indiana, Iowa, Kansas, Louisiana, Maine, Maryland, Massachusetts, Michigan, Minnesota, Mississippi, Missouri, Montana, Nebraska, Nevada, New Jersey, New Mexico, New York, North Carolina, Ohio, Oregon, Pennsylvania, Rhode Island, Tennessee, Texas, Utah, Vermont, Virginia, Washington, Wisconsin.

ARGENTINA, AUSTRALIA, AUSTRIA, BARBADOS, BELGIUM, BOLIVIA, BRAZIL, CANADA, CHILE, COLOMBIA, DENMARK, DOMINICAN REPUBLIC, ECUADOR, ENGLAND, FINLAND, FRANCE, GERMANY, GHANA, GREECE, GUATEMALA, HONG KONG, IRELAND, ITALY, JAPAN, MALAYSIA, MEXICO, NETHERLANDS, NEW ZEALAND, NORWAY, PARAGUAY, PERU, PHILIPPINES, PUERTO RICO, SINGAPORE, SPAIN, SWEDEN, SWITZERLAND, TRINIDAD, VENEZUELA.

FRONT ROYAL, Virginia: SRF Greenfield Retreat. Route 5, Box 625 (Zip code 22630). Telephone (703) 635-5062.

FULLERTON, California: Temple, 142 East Chapman Avenue (Zip code 92632). Telephone (714) 525-1291 or (213) 225-2471.

HOLLYWOOD, California: Ashrama, Temple, and India Hall, 4860 Sunset Boulevard, (Zip code 90027). Telephone (213) 661-8006.

PACIFIC PALISADES, California: Ashrama, Temple, Lake Shrine, and Mahatma Gandhi World Peace Memorial, 17190 Sunset Boulevard (Zip code 90272). Telephone (310) 454-4114. Open to the public 9:00 a.m. to 4:45 p.m. daily except Mondays and holidays. (Occasionally closed on Saturdays.)

PASADENA, California: Temple, 150 North El Molino Avenue (Zip code 91101). Telephone (818) 578-9765 or (213) 225-2471.

PHOENIX, Arizona: Temple, 6111 North Central Avenue (Zip code 85012). Telephone (602) 279-6140.

RICHMOND, California: Temple, 6401 Bernhard Avenue (Zip code 94805). Telephone (510) 232-6652.

SAN DIEGO, California: Temple, 3072 First Avenue (Zip code 92103). Telephone (619) 295-0170.

(ऊपर) श्री शोभेन चन्द्र राय, जेनरल सेक्रेट्री, योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया, का सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप के अन्तर्राष्ट्रीय मुख्यालय में, सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप की उपाध्यक्षा, श्री मृणालिनी माता द्वारा स्वागत। श्री राय वहाँ 13 जुलाई को श्री एस० एन० झा, योगदा सत्संग शैक्षणिक संस्थानों के सेक्रेट्री, तथा श्रीमती पूर्णिमा झा के साथ पहुँचे थे। (नीचे) स्वामी शान्तानन्द गिरि, योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया के संयुक्त सेक्रेट्री तथा कोषाध्यक्ष, 7 अगस्त को सेल्फ रीयलाइज़ेशन फेलोशिप के अन्तर्राष्ट्रीय मुख्यालय में पहुँचे। योगदा सत्संग सोसाइटी के पदाधिकारी लॉस एन्जिलस में योगदा सत्संग सोसाइटी/सेल्फ-रीयलाइज़ेशन फेलोशिप की संघमाता एवं अध्यक्षा, श्री श्री दयामाता जी का आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन प्राप्त करने तथा भारत में परमहंस जी की क्रिया-योग शिक्षाओं के प्रचार-प्रसार के सम्बन्ध में परामर्श करने आये थे। सेल्फ-रीयलाइज़ेशन के सन्यासियों तथा सन्यासिनियों ने आनन्द भरे प्रणाम तथा गुलाब-पत्तियों की वृष्टि से अतिथियों का स्वागत किया।

स्वामी श्रीयुक्तेश्वर निःशुल्क शिक्षा-केन्द्र, जिसका उद्घाटन योगदा सत्संग शाखा केन्द्र श्रीरामपुर, पश्चिम बङ्गाल में 15 अगस्त 1991 को हुआ।

पश्चिम बङ्गाल में योगदा सत्संग विद्यालयों के छात्र राँची में सितम्बर 15-2[illegible] 1991 में आयोजित आदर्श-जीवन प्रशिक्षण शिविर में अपने सांस्कृतिक कार्यक्रम में व्यायामिक कौशल का प्रदर्शन करते हैं। इन विद्यालयों में विद्यालय की पढ़ाई के साथ-साथ शरीर, मन तथा आत्मा के संतुलित विकास पर बल दिया जाता है।